



## जिवेदन

"आत्मा की मुक्ति का क्या उपाय है ?" यह एक विश्वव्यापी तथा सनातन प्रश्न है। ससार के नाशवान सुख-दुःखों की ऊपेक्षा निर्बाध तथा अनन्त सुख की लोभ में मानवआत्मा सदैव तो भटकती रही है। इस ससार में भी किस प्रकार अधिकाधिक सुख प्राप्ति पूर्वक जीवन व्यतीत किया जा सकता है यह प्रश्न भी साथ ही सलग्न है। जैन दर्शन में उक्त प्रश्नों का उत्तर बड़े विस्तार तथा वैज्ञानिक रूप से दिया गया है। जैनागम के बृहत्तम भंडार में इन्हीं प्रश्नों का उत्तर भरा पड़ा है। उमी बृहत्तम ज्ञान समुद्र का सार आचार्य श्रीमद् उमास्वामी (समय दूसरी शताब्दी) ने 'तत्त्वार्थ सूत्र' में गागर में सागर के समान सेंबो दिया है। इसी कारण इसे मोक्ष शास्त्र भी कहते हैं।

इसके प्रथम सूत्र 'सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणिमोक्षमार्गः' में ही मोक्ष का मार्ग दर्शाया गया है। अर्थात् सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र मिल कर ही मोक्ष के मार्ग हैं। दूसरे सूत्र में बताया गया है कि तत्त्वों का अध्ययन ही सम्यक् दर्शन है। चौथे सूत्र में जीव, अजीव, आस्रव, बध, सवर, निर्जरा और मोक्ष इन सात तत्त्वों का निर्देश है। प्रथम के दस अध्यायों के ३५७ सूत्रों में इन्हीं सात तत्त्वों का प्रमथः विस्तृत वर्णन है। प्रथम चार अध्यायों में जीव तत्त्व का, पाँचवें अध्याय में अजीव तत्त्व का, छठे और सातवें अध्याय में आस्रव तत्त्व का, आठवें अध्याय में बध तत्त्व का, नवें अध्याय में सवर और निर्जरा तत्त्व का तथा दसवें अध्याय में मोक्ष तत्त्व का वर्णन है।

जिस प्रकार वेद, वाइबिल तथा कुरान आदि अन्य धर्मों के प्रमुख ग्रंथ हैं उसी प्रकार 'तत्त्वार्थ सूत्र' भी जैन साहित्य का प्रमुख पूज्य ग्रंथ है। जैन धर्मावलम्बियों के दोनों सम्प्रदायों में इस ग्रंथ की समान रूप में मान्यता तथा आदर है। दोनों सम्प्रदायों के मान्य आचार्यों ने इस पर महत्वपूर्ण टीकाएँ लिखी हैं। संस्कृत भाषा में होने के कारण हर व्यक्ति उनकी समझ नहीं पाता। हिन्दी ग्रंथ



# तत्त्वार्थ सूत्र

वी

## विषय सूची

### बह्वा अर्थात्

बह्वाचरण	१	अवग्रहण अग्रिमान के स्वामी	१०
बोत का उपाय	२	छायेकमनिमित्तज्ञान के स्वामी	११
बन्धनजन का ज्ञान	२	मन पश्ये ज्ञान के दो भेद	११
बन्धनजन की उत्पत्ति के भेद	२	दोनों भेदों में विवेचना	१२
बन्धनों के नाश (७ उपाय)	३	अवग्रही और अद्वैत ज्ञान में अन्तर	१२
बिभेदों के ४ प्रकार	३	मनि तथा ध्युनज्ञान का विषय	१३
बन्धों को ज्ञानने का उपाय	४	अवग्रिज्ञान का विषय	१३
अन्य उपाय (पट ध्युनयोग)	४	मन पश्ये ज्ञान का विषय	१३
बोकादि को ज्ञानने के		बेचन ज्ञान का विषय	१३
और उपाय	५	एक भाव विज्ञाने ज्ञान समग्र है	१४
ज्ञान के भेद	५	तीन विषयः ज्ञान	१४
पुर्वोक्त पाँच ज्ञान ही प्रमाण है	६	गो विन प्रकार अद्विष्ट करते हैं	१४
पुर्वोक्त पाँचों ज्ञानों में भेद	६	मन के ३ भेद	१५
मनिज्ञान के नामान्तर	७		
मात्रज्ञान किमये उत्पन्न			
होता है	७		
मनिज्ञान के भेद	७		
अवग्रह आदि ज्ञानों के १२ भेद	८	जीव के पाँच भाव	१७
ये भेद किमये विवेचन है	९	इन भावों के भेद	१८
अवग्रह आदि में अन्तर	९	औपम्यिक भाव के दो भेद	१८
अज्ञान अवग्रह किमये नहीं होता	९	साधिक भाव के ९ भेद	१९
ध्युन ज्ञान के भेद	१०	मिथ भाव के १८ भेद	२०

### द्वारा अर्थात्

[illegible]

[illegible]

अनिष्टि सविभाग दान के अतिथार	११४	प्रवेश बध का कथन	१११
सत्संयता के अतिथार	११५	कर्मों की गुण प्रकृति	१११
दान का स्वरूप	११६	कर्मों की पाप प्रकृति	११४
दान के फल में विशेषता	११६		
		-----	
आठवीं अध्याय		नवीं अध्याय	
ब्रध के कारण	११७	मकर का संशय	११६
ब्रध का स्वरूप	११९	मकर के कारण	११६
ब्रध के भेद	११९	मकर का प्रमुख कारण	११७
भूल प्रकृति ब्रध के ८ भेद	१२०	गुप्ति का समण	११७
आठों कर्मों की उत्तर प्रकृतियों	१२१	समिति के ५ भेद	११८
ज्ञानावरण कर्म के ५ भेद	१२१	समिति और गुप्ति में अन्तर	११८
दर्शनावरण कर्म के ९ भेद	१२१	दम धर्म	११८
वेदनीय कर्म के २ भेद	१२२	बारह अनुप्रेक्षा (भावना)	११९
मोहनीय कर्म के २८ भेद	१२३	परीपह सहने का उद्देश्य	१४०
आयु कर्म के ४ भेद	१२५	परीपहों के २२ स्वरूप	१४०
नाम कर्म की ४२ प्रकृतियाँ	१२५	विभिन्न गुणस्थानों में परिपह	१४२
शोध कर्म के २ भेद	१२९	किस कर्मोदय से कौन परिपह	१४३
अन्तराय कर्म के ५ भेद	१२९	एक साथ अधिकतम परिपह	१४४
कर्मों की उत्कृष्ट स्थिति	१२९	चारित्र के भेद	१४५
कर्मों की अधोऽस्थिति	१३१	बाह्य तप के ६ भेद	१४५
अनुभय ब्रध का कथन	१३१	वायस्नेह तथा परिपह में अन्तर	१४६
कर्म के समान फल	१३२	अभ्यन्तर तप के ६ भेद	१४७
फलपरात कर्म निर्जरा	१३२	अभ्यन्तर तपों के उपभेद	१४७
		प्रायश्चित्त के ९ भेद	१४७

विनय तप के ४ भेद	१४८	बीषार का सङ्ग	१२७
ईसावाय तप के १० भेद	१४९	पृथक्त्व वितर्क	१२८
स्वाध्याय तप के ५ भेद	१५०	एकत्व वितर्क	१२८
भ्युत्थान (त्याग) के २ भेद	१५०	मूढम क्रिया प्रतिपत्ति	१२८
त्याग, परिग्रह त्याग तथा		भ्युत्थान क्रिया निवर्ति	१२९
भ्युत्थान में अन्तर	१५०	सम्पद्दृष्टियों के असमान निजरा	१२९
ध्यान का स्वरूप	१५१	निर्ग्रन्थों के भेद	१२०
ध्यान के ४ भेद	१५१	पुनाक आदि भुक्तियों की अन्य	
		विशेषताएँ	१२१
भार्त ध्यान के ४ भेद	१५२		
भार्त ध्यान के द्वारक	१५३	इसकी अध्याय	
रौद्र ध्यान के भेद	१५३	केवल ज्ञान कब होता है	१२४
रौद्र ध्यान के द्वारक	१५३	भोग का सङ्ग और कारण	१२४
धर्म ध्यान का स्वरूप	१५४	कर्मों की निजरा का कम	१२५
शुक्ल ध्यान के स्वाधी	१५४	मुक्तावस्था में ज्ञेय तात्त्विक भाव	१२५
शुक्ल ध्यान के ४ भेद	१५५	मुक्त जीव की ऊर्ध्व गति	१२६
शुक्ल ध्यान का आलम्बन	१५६	उर्ध्वगति का कारण	१२७
आदि के २ शुक्ल ध्यानों का		मुक्त जीव मोक्ष के अन्त तक ही	
विशेष कथन	१५६	कथो जाता है	१२८
इम कथन का अर्थवाद	१५६	मुक्त जीवों में परस्पर	
वितर्क का सङ्ग	१५७	भेद व्यवहार का विचार	१२८



## “चीत्तीरुती स्तुति”

(रचयिता : मन्दकिशोर जैन, एम० ए०)

तीर्थकर चीत्तीरु हमारे मुद्रि जिनकी गर पागल टारे ॥

आदि, अत्रि, सभन अभिनन्दन,

मुमति, पदमप्रभु, करलो वदन ।

यो मुगारो, चन्दा प्रभु प्यारे ॥ तीर्थकर ० ॥

पुष्पदन, शान्त, मुखरारी,

प्रभु, श्रंयाम की शोभा प्यारी ।

दुखियो के गय कष्ट निवारे ॥ तीर्थकर ० ॥

वाता पूज्य, पुनि विमल, अनन्ता,

धर्म, शान्ति, सोहे भगवन्ता ।

आए है हम शरण तिहारे ॥ तीर्थकर ० ॥

कुचनारा जी, अरह यशस्वी,

मलिनारा से महत तपस्वी ।

जिन तप कर अप सारे जारे ॥ तीर्थकर ० ॥

मुनिमुग्रत, नमिनारा हमारे,

नेमिनारा जी राजन प्यारे ।

मीर फेंक तप हेतु सिधारे ॥ तीर्थकर ० ॥

पार्श्वनारा की छवि अनि न्यारी,

शेषनारा करते रखवारी ।

सामा की आँखो के तारे ॥ तीर्थकर ० ॥

महावीर का यश अति भारी,

बानपने जिन दीक्षा धारी ।

त्रिशला भी, सिद्धार्थ दुनारे ॥ तीर्थकर ० ॥

भक्ति भाव से जो नित ध्यावे,

जग का आवागमन मिटावे ।

बयो नहि तर-भव जनम मुधारे ॥ तीर्थकर ० ॥

# तत्त्वार्थ सूत्र

मंगलाचरण

४:—मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं वर्त्तुमानम् ।  
ज्ञातारं विश्वनरवातां यन्दे नन्दुस्त्वयम् ॥

॥ या .— कर्म रूपं ययंतं विद्वन्मया ॥

मोक्ष मार्गं पुनि विद्धं स्वयम् ॥

विद्वन्मया तस्य ज्ञानं विद्वन्मया ॥

संस्कृत ११११ -

मूल - सम्यग्दर्शनं जातं चार्थिगर्भं भाग्यमर्थं ॥१॥

भाषा - सम्यक् दर्शन मूल की प्राप्ति ।

पुनः उत्पन्न है सम्यक् ज्ञान ॥

सम्यक् चार्थिगर्भं जातं ।

अथ मित मोक्ष मार्ग की प्राप्ति ॥१॥

सम्यग्दर्शनं वा तद्वत् -

मूल - तत्त्वार्थव्यवधानं सम्यग्दर्शनम् ॥२॥

भाषा - वस्तु स्वभावात् कृत्वा तत्त्वार्थं ।

उसकी भविजन जाने सार्थ ॥

ता पर हीय अटल धृष्टान् ।

सम्यक् दर्शन सो ही मान ॥२॥

सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति के भेद -

मूल :- तन्निर्गमिदिधिगमादा ॥३॥

भाषा :- उपजे दोहि प्रकार विशेष ।

निज स्वभाव अथ पर उपदेश ॥

निजहि स्वभाव 'निर्गमज' कहा ।

नाम 'अधिगमज' दूजा सहा ॥३॥

तत्त्वों के नाम :-

मूल :- जीवाजीवाश्रय-बन्ध-संवर-निर्जरा-मोक्षस्तत्त्वम् ॥४॥

भाषा :- सात तत्त्व हैं—‘जीव’, ‘अजीव’ ।

‘आश्रय’, ‘बंध’ जगत की नींव ॥

पंचम ‘संवर’ पुनि ‘निर्जरा’ ।

सप्तम ‘मोक्ष’ महा सुख भरा ॥४॥

निक्षेपों के प्रकार :-

मूल :- नाम स्थापना द्रव्य-भावतस्तन्यास ॥५॥

भाषा :- लोक काज हित विन गुणसार ।

नाम निक्षेपण चार प्रकार ॥

‘नाम’, ‘स्थापना’, ‘द्रव्य’ निक्षेप ।

सपर्याय ‘भाव’ निक्षेप ॥५॥

५ वें सूत्र का भावार्थ :-

सो चारों अब लीजे ज्ञान । जा सो ही सबकी पहिचान ॥

‘नाम’-धीर रख दीजे कोय । आवश्यक नहि गुण सो होय ॥

दो प्रकार ‘थापना’ बताए । ‘तदाकार’ जिन मूर्ति मुहाए ॥

घोड़े, हाथी, ऊँट विचार । सतरज हि के ‘अतदाकार’ ॥

जिस पत्थर से प्रतिमा होय । कह दीजे यदि प्रतिमा सोय ॥

शक्ति परिणमन की बतलाए । सो ही ‘द्रव्य’ निक्षेप कहाए ॥

जैसा हो तस करहि बखान । इन्द्र कहे इन्द्रहि गुणसान ॥

वर्तमान कहिए पर्याय । सो ही ‘भाव’ निक्षेप कहाए ॥५॥

मन्त्रों को जानने का उपाय -

मूल - प्रमाणनौगभिषग ॥६॥

भाषा - जीव-अजीव परारय जोय ।

इनका ज्ञान करायें दोय ॥

सकल वस्तु का ज्ञान 'प्रमाण' ।

एक देश 'नय' सीजे जान ॥६॥

जीव आदि तत्त्वों को जानने के अन्य महायक उपाय :-

मूल - निर्वेन-स्वामित्व-साधनाधिकरण-स्थिति-विधानन ॥७॥

भाषा - घट अनुयोग महायक जान ।

पूर्ण वस्तु का होये ज्ञान ॥

सत-श्रद्धान कहा 'निर्वेन' ।

अरु 'स्वामित्व' न संशय लेश ॥

सीजा 'साधन' पुनि 'अधिकरण' ।

'स्थिति' हो है पंचम चरण ॥

घट 'विधान' कहावे वही ।

भेद-प्रभेद बतावे सही ॥७॥

७ वें मूत्र का भावार्थ :-

अधिकारी 'स्वामित्व' बताए । सम्यकदर्शन जीव लहाए ॥

उत्पत्ति हि कारण बतलाए । सो 'साधन' अनुयोग कहाए ॥

'अधिकरण' वस्तु आधार । 'स्थिति' कहिए काल विचार ॥७॥

जीवादि को जानने के कुछ और सहायक उपाय :-

मूल:-सत्त्वस्या-क्षेत्र-स्पर्शन कालान्तर-भावाल्पबहुत्वैश्च ॥८॥

भाषा :- सत्, 'संख्या' अरु क्षेत्र' विचार ।

'स्पर्शन', 'काल' भेद उरधार ॥

'अन्तर', 'भाव' आदि अनुयोग ।

'अल्पबहुत्व' सु अष्ट प्रयोग ॥८॥

८ वें सूत्र की व्याख्या—

'सत्' है जो अस्तित्व बताए । 'संख्या' गिनती भेद कहाए ॥  
मिले जहाँ सो 'क्षेत्र' यखान । 'स्पर्शन' विचरण क्षेत्रहि जान ॥  
'काल'—समय जानें सब कोय । विरह काल ही 'अन्तर' होय ॥  
एक दशा तज दूजी लहे । पुनि पहली में आकर रहे ॥  
औपसमिक आदिक त्रय 'भाव' । तुलना 'अल्पबहुत्व' बनाव ॥८॥

ज्ञान के भेद :-

मूल.-मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानि ज्ञानम् ॥९॥

भाषा :- ज्ञान कहे आगम में पंच ।

'मति', 'श्रुत', 'अवधि' न संशय रंच ॥

चौथा 'मन पर्यय' ही कहा ।

'पंचम 'केवल' जिनवर लहा ॥९॥

मनो ११ नीति जानो परमाण है -

मूत्र - परमाण ॥१०॥

भाषा - सो ही परमान परमाण ।

इन्द्रिय ज्ञान मगल्य जान ॥

मूत्रम दम्तु हो या अति दूर ।

इन्द्रिय किम जाने मरपूर ॥१०॥

पूर्वोक्त पांचो ज्ञानों में भेद -

मूत्र - आद्ये परोक्षम ॥ ११ ॥

प्रत्यक्षमन्यत् ॥ १२ ॥

भाषा - पर वश उपजें सो ही मान ।

दो परोक्ष हैं मति, श्रुत ज्ञान ॥११॥

अवधि आदि त्रय अतिम जोय ।

हैं प्रत्यक्ष कहावें सोय ॥१२॥

११ वें व १२ वें मूत्र का भावार्थ—

इन्द्रिय, मन, उपदेश सहाय । परवश सोइ परोक्ष कहाय ॥११॥

अक्ष नाम आत्म का मान । ता सो ही प्रत्यक्ष बखान ॥

इन्द्रिय आदि सहाय न होय । आत्म से ही उपजें सोय ॥१२॥

मतिज्ञान के नामान्तर :—

मूल :—मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ता अभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥१३॥

भाषा :—पुनि नामान्तर है मतिज्ञान ।

‘मति’, ‘स्मृति’, ‘संज्ञा’, ‘चिन्ता’ मान ॥

साधन करे साध्य अनुमान ।

पंचम ‘अभिनिबोध’ सो जान ॥१३॥

१३ वें सूत्र का भावार्थ—

इन्द्रिय मनहि अवग्रह होय । रूप ग्रहण ‘मति’ कहिए सोय ॥

याद पुरानी ‘स्मृति’ वही । जय तय मन मे आवे सही ॥

पूर्व वस्तु से करहि मिलान । जोड़ रूप सो ‘संज्ञा’ जान ॥

धूम देख कर अग्नि द्विज्ञान । तर्क सोइ ‘चिन्ता’ करि जान ॥१३॥

मतिज्ञान किससे उत्पन्न होता है —

मूल :—तदिन्द्रियानिन्द्रिय-निमित्तम् ॥१४॥

भाषा :—पंचेन्द्रिय अरु मन के मिले ।

मतिज्ञान आतम में खिले ॥१४॥

मतिज्ञान के भेद :—

मूल :—अवग्रहेहावाय धारणा ॥१५॥

भाषा :—‘अवग्रह’, ‘ईहा’ और ‘अवाय’ ।

भेद ‘धारणा’ सहित बताय ॥१५॥

१५ वें सूत्र की व्याख्या—

इन्द्रिय दर्शन पहले मान । तत्क्षण होय ‘अवग्रह’ जान ॥

इच्छा होवे ज्ञान विशेष । ‘ईहा’ सोइ अनिश्चय शेष ॥

टीक वस्तु का निर्णय होय । भेद ‘अवाय’ बहावे सोय ॥

अविस्मरण ‘धारणा’ कहाय । मतिज्ञान चव भेद बताय ॥१५॥



॥ १०० ॥

[illegible]

३।५। -- जो मरिहानम मरिह भुवनानम ।

ताने मृग मेव वो माग ॥

'अंग बाह्य' कथगी यह भेद ।

‘अग प्रविष्ट’ न् द्वायग भेद ॥२०॥

### २०. ४ गुण का भार्य -

ज्ञानं दशम्यथ केचन ज्ञानं । दिव्याग्निं उपरक्ष ममान् ॥

मन्मथः प्रीतिम् अग्रे वन्दाम् । मां श्री 'अग्रे वन्दाम्' कुरुते ॥

सुखं धनं ज्ञानं भ्रातृभार । मोक्षं भ्रातृभारं विनश्यत ॥२०॥

भव प्रत्यय अधिष्ठान के स्वामी -

मूल — भव प्रत्ययोऽत्रधिदेवनायकाणाम् ॥२१॥

भाषा .— अवपिज्ञान दो भेद यत्ताए ।

प्रथम-सो 'भव प्रत्यय' कहलाए ॥

वेध नारकीयों को होय ।

मय हो कारण कहिए सोय ॥२१॥

**२१ वे सूत्र का भावार्थ :-**

आयु, नाम कमैज पर्याय । आगम मे सो भव कह्योए ॥

देव, नारकी जन्में जोय । अवधिज्ञान जन्महि से होय ॥२१॥

क्षयोपगमनिमित्तः अवधिज्ञान के स्थानी :-

मूल :- क्षयोपगमनिमित्तः पट्विकल्पः क्षेपाणाम् ॥२२॥

भाषा :- है द्वितीय 'क्षयोपगमनिमित्त' ।

पट प्रकार सुनिय पर चित्त ॥

यह मनुष्य तिर्यंचन होय ।

'गुण प्रत्यय' भी कहिए सोय ॥२२॥

२२ वें सूत्र का भावार्थ :-

क्षय उपगम कारण द्वि प्रधान । भय नहि, सो गुण प्रत्यय जान ॥  
स्वामि जीव सँग जावे जोए । 'अनुगामी' ही कहिए सोए ॥  
सग साथ नहि जीवहि जाय । सोइ 'अननुगामी' कहलाए ॥  
परिणामहि विगुडि वग जान । 'वर्धमान' नित प्रति सो मान ॥  
कारण मस्नेसित परिणाम । 'हीयमान' घट आठो याम ॥  
घट-वट दिन जो एर समान । ताहि 'अवस्थित' कहते जान ॥  
आमें जब तब घट बढ़ होय । अवधिज्ञान 'अनवस्थित' सोय ॥२२॥

मनः पर्यय ज्ञान के भेद :-

मूल :- श्रृजु-विपुलमती मनः पर्ययः ॥२३॥

भाषा :- मन पर्यय के भी दो काम ।

'श्रृजुमति' और 'विपुलमति' नाम ॥२३॥

२३ वें सूत्र का भावार्थ :-

सरल रूप में पर मन जोय । ज्ञान ताहि का 'श्रृजुमति' होय ॥  
सरल, जटिल सबही का ज्ञान । ता का नाम 'विपुलमति' जाना ॥

\* \* \* \* \*

पू० — अहंकार-रूप-संसार, अहंकार-ही-मैं ॥१॥

— ॥ जो अहिंसा-त-अहिंसा-सुख-ही-त- ॥

न-के-सुख-मे-ह-हो-अहंकार ॥

ही-आ-त-क-त-ही-त-ह-मे-ह ॥

ही-ही-ह-ह-त-ही-ही-ह-मे-ह ॥२॥

\* \* \* \* \*

अ-हं-कार-रूप-संसार-अहंकार-ही-मैं-अहंकार ॥

अ-हं-कार-रूप-संसार-अहंकार-ही-मैं-अहंकार ॥

अ-हं-कार-रूप-संसार-अहंकार-ही-मैं-अहंकार ॥

अ-हं-कार-रूप-संसार-अहंकार-ही-मैं-अहंकार ॥

पू० — अहंकार-रूप-संसार-अहंकार-ही-मैं-अहंकार ॥३॥

अ-हं-कार-रूप-संसार-अहंकार-ही-मैं-अहंकार ॥

अ-हं-कार-रूप-संसार-अहंकार-ही-मैं-अहंकार ॥

अ-हं-कार-रूप-संसार-अहंकार-ही-मैं-अहंकार ॥

अ-हं-कार-रूप-संसार-अहंकार-ही-मैं-अहंकार ॥४॥

२१ व श्लोक का भावार्थ —

आहु, नाम-कर्म-त-ही-मैं-अहंकार-ही-मैं-अहंकार ॥

देह, नारकी-त-ही-मैं-अहंकार-ही-मैं-अहंकार ॥५॥

क्षयोपशमनिमित्तः अवधिज्ञान के स्वामी :-

मूत्र :- क्षयोपशमनिमित्तः पट्विषयः दोषाणाम् ॥२२॥

भाषा :- है द्वितीय 'क्षयोपशमनिमित्त' ।

पट प्रकार सुनिय घर चित्त ॥

यह मनुष्य तिर्यंचन होय ।

'गुण प्रत्यय' भी कहिए सोय ॥२२॥

२२ वें मूत्र का भावार्थ :-

क्षय उपशम कारण हि प्रधान । भय नहि, सो गुण प्रत्यय जान ॥

स्वामि जीव सँग जाये जोए । 'अनुगामी' हों कहिए सोए ॥

गंग साथ नहि जीवहि जाय । साँझ 'अननुगामी' कहमाए ॥

परिणामहि विशुद्धि वश जान । 'वर्धमान' नित प्रति सो मान ॥

कारण मबनेमित्त परिणाम । 'हीनमान' घट आटो याम ॥

घट-बड़ यिन जो एक समान । ताहि 'अवस्थित' कहने जान ॥

जामें जब तब घट बड़ होय । अवधिज्ञान 'अनवस्थित' सोय ॥२२॥

मनः पर्यय ज्ञान के भेद :-

मूल :- अजु विपुलमती मनः पर्ययः ॥२३॥

भाषा :- मन पर्यय के भी दो काम ।

'अजुमति' और 'विपुलमति' नाम ॥२३॥

२३ वें मूत्र का भावार्थ :-

सरल रूप में पर मन जोय । ज्ञान ताहि का 'अजुमति' होय ॥

सरल, अटिल सबही का ज्ञान । ता का नाम 'विपुलमति' जान ॥२३॥

मन पश्य के नाम भेदों में विशेषता -

सूत्र - विदुःशत्रुत्वमिह त्वमधि-मन पश्ययोः ॥२४॥

भाषा - दोनों के दो भेद विशेष ।

प्रथम 'विदुः' न संशय तेषां ॥

ज्ञान आचरण हटते कड़े ।

'अप्रतिपात' सो संयम बढ़े ॥२४॥

अवधिज्ञान और मन पर्यय ज्ञान में अंतर -

सूत्र - विदुःशत्रु-क्षेत्र-स्वामि विपश्योऽवधि-मन पर्ययोः ॥२५॥

भाषा - अवधि और मन पर्यय ज्ञान ।

चार अपेक्षा अंतर जान ॥

प्रथम 'विदुः', 'क्षेत्र' पुनि कहा ।

'स्वामी', 'विपश्य' भेद का रहा ॥२५॥

२५ वे सूत्र का भावार्थ :-

सूक्ष्मपने में अन्तर मान । आगम ताहि 'विदुः' बखान ॥

'क्षेत्र' होय अन्तर स्थान । 'स्वामी' सो किनकी हो जान ॥

सैनी पंचेन्द्रिय गति चार । तिनके अवधिज्ञान चितधार ॥

कर्म भूमि के मानव मान । कुछ में ही मन पर्यय ज्ञान ॥

ज्ञान कीन वस्तु का होय । 'विपश्य' भेद ही कहिए सोय ॥२५॥

नय के भेद :—

मूल :- नैगम-संग्रह-व्यवहार-जुमूत्रशब्द-समभिरुद्ध-भूतानयाः ॥३३॥

भाषा :— 'नैगम', 'संग्रह', अरु 'व्यवहार' ।

नय आगम में विविध प्रकार ॥

'समभिरुद्ध', 'श्रुतु सूत्र' व शब्द ।

'एवंभूत' सप्त उपलब्ध ॥३३॥

३३ वें सूत्र का भावार्थ :—

हर पदार्थ में धर्म अनेक । ज्ञान नयों से हो प्रत्येक ॥  
 भूत, भविष्यति जो पर्याय । वर्तमान में सो बतलाय ॥  
 रत्नकर ईंधन, पानी, धान । कहे पकाता भोजन पान ॥  
 आगे जो है बनना मान । पूर्ण रूप दे 'नैगम' जान ॥  
 एक कहे पूरा समुदाय । या उसकी विभिन्न पर्याय ॥  
 द्रव्य कहे सब द्रव्यहि जान । सैन्य कहे कुल सैन्य बखान ॥  
 संग्रह रूप ज्ञान में आए । सो ही 'संग्रह' नय कहलाए ॥  
 संग्रह वस नहि पूर्ण विचार । भेद-प्रभेद करे 'व्यवहार' ॥  
 भूत, भविष्यत को तज देख । वर्तमान पर्यायहि लेष ॥  
 एक समय इक ही पर्याय । मनुष्यायुपर्यन्त कहाए ॥  
 ग्रहण दृश्य पर्यायहि जान । सो नय ही 'श्रुतुसूत्र' बखान ॥  
 संस्था, लिंग आदि व्यभिचार । दूर 'शब्द' से हो चित्तधार ॥  
 त्रियां, पुरुष, कालादिक भेद । से अर्थों में होय प्रभेद ॥  
 अर्थ भेद हो बिन व्यभिचार । एक वस्तु में कई प्रकार ॥

एक माय कितने ज्ञान हो गाने हैं -

मूल :- एतदीनि भाग्यानि युगपदेष्टमिमा चतुर्व्यः ॥३०॥

भाषा :- ज्ञान जोय में निम्न प्रकार ।

एक होय या क्रमशः चार ॥

एक होय तब केवल ज्ञान ।

दो सँग हों बस मति श्रुत ज्ञान ॥

तीन होंय मति श्रुत सँग लेख ।

अवधि, मनः पर्यय में एक ॥

चार साथ हों 'केवल' छोड़ ।

और न कोई नूतन जोड़ ॥३०॥

तीन मिथ्याज्ञान :-

मूल :- मति-श्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥३१॥

भाषा :- मति, श्रुत, अवधि विपर्यय सहित ।

तीन ज्ञान करते हैं अहित ॥

कुमति, कुश्रुत आदिक त्रय नाम ।

अहित रूप ही तिनके काम ॥३१॥

मिथ्याज्ञान किस प्रकार अहित करते है :-

मूल :- सदसतोरविशेषाय दृष्ट्योपलब्धे ह्यमस्तवत् ॥३२॥

भाषा :- सत्त अह असत्त न कर पहिचान ।

मिथ्यादृष्टि भ्रमित-मति-ज्ञान ॥

सो उन्मत्त पुरुष की नाय ।

यस्तु ग्रहण में निज रुचि लाय ॥३२॥

नय के भेद :—

मूल :- नैगम-संग्रह-व्यवहार-जुमूत्रशब्द-समभिहितवभूतानया ॥३३॥

भाषा :— 'नैगम', 'संग्रह', अरु 'व्यवहार' ।

नय आगम में विविध प्रकार ॥

'समभिहित', 'ऋजु सूत्र' व शब्द ।

'एवंभूत' सप्त उपलब्ध ॥३३॥

३३ वें मूत्र का भावार्थ :—

हर पदार्थ में घर्म अनेक । ज्ञान नयों से हो प्रत्येक ॥  
 भूत, भविष्यति जो पर्याय । वर्तमान में सो बतलाय ॥  
 रस्वकर ईधन, पानी, धान । वहे पकाता भोजन पान ॥  
 आगे जो है बनना मान । पूर्ण रूप दे 'नैगम' जान ॥  
 एक वहे पूरा समुदाग । या उसकी विभिन्न पर्याय ॥  
 द्रव्य वहे सब द्रव्यहि जान । गैर्य कहे कुल सैन्य बखान ॥  
 संग्रह रूप ज्ञान में आए । गो ही 'संग्रह' नय कहनाए ॥  
 संग्रह बत नहि पूर्ण विचार । भेद-प्रभेद करे 'व्यवहार' ॥  
 भूत, भविष्यत को तज देय । वर्तमान पर्यायहि लेय ॥  
 एक समय इक ही पर्याय । मनुष्यायुपर्यन्त कहाए ॥  
 ग्रहण दृश्य पर्यायहि जान । सो नय ही 'ऋजुमूत्र' बखान ॥  
 सभ्या, लिंग आदि व्यभिचार । दूर 'शब्द' से हो चितधार ॥  
 क्रिया, पुरुष, कालादिक भेद । से अर्थों में होय प्रभेद ॥  
 अर्थ भेद हो बिन व्यभिचार । एक वस्तु में कई प्रकार ॥



इन भावों के भेद —

मूल — दिनवाटादर्शनविशतिविभेदा यथाप्रमम् ॥२॥

भाषा — दो, नव, भेद प्रथम दो कहे ।

तोजे के अटठारह रहे ॥

इविकस भेद 'औदयिक' भाव ।

'परिणामिक' के त्रय मन लाव ॥२॥

औपशमिक भाव के दो भेद —

मूल — सम्यक्त्वचारित्र्ये ॥३॥

भाषा :— उपशम कर्म प्रकृति जत्र सात ।

'औपशमिक सम्पक्त्व' कहात ॥

उपशम मोहनीय सब मित्र ।

कहते 'औपशमिक-चारित्र्य' ॥३॥

रे मूत्र की व्याख्या —

'स्तानुबन्धी' विशोभ । क्रोध, मान, माया अह लोभ ॥  
'व्यात्त्रहि', 'सम्यकमिष्यात्व' ।

अह 'सम्पक्त्व' सहित सो सान ॥  
प्रकृतियों के उपशमे । जो सम्यक्त्व आत्म में जमे ॥  
शमिक सम्यक्त्व बलान । भविजन मन कीजे श्रद्धान ॥  
'स्तानुबन्धी' एक जान । दूजी सोइ 'अप्रत्याख्यान' ॥  
ती 'प्रत्याख्यान' बनाय । चौधी है 'सज्जलन' कपाय ॥  
व, मान, माया अह लोभ । गुणन किए सोजह विशोभ ॥  
कपाय पुनि नो चितधार ।

'हास्य' 'अरति' 'रति' 'शोक' विचार ॥  
व' हि, 'जुगुप्सा' हो मन खेद । 'स्त्री'-'पुरुष'-'नपुंसक' येद ॥  
'म्यात्व' हि, 'सम्यकमिष्यात्व' ।

अह 'सम्पक्त्व' द्वि त्रय हो जात ॥  
हनीय अटठारह मित्र । उपशम 'औपशमिक चारित्र्य' ॥३॥



संज्ञी (अर्थात् मन सहित) जीव :-

मूल :- सज्जित, समनस्काः ॥२४॥

भाषा :- मन घुत जो सो संज्ञी जान ।

बिन मन जीव असंज्ञी मान ॥२४॥

नया शरीर धारण हेतु जीव का गमन :-

मूल :- विग्रहगती कर्मयोगः ॥२५॥

भाषा :- कर्मयोग विग्रहगति गहे ।

तब नय कर्म जीव पुनि लहे ॥

मृत्यु थान से छय कर जाए ।

नूतन जन्म जगह में आए ॥२५॥

जीव और पुद्गलों के गमन का क्रम :-

मूल :- अनुश्रेणी गतिः ॥२६॥

भाषा :- पुद्गल जीवादिक चित्तधार ।

गति होती श्रेणी अनुसार ॥२६॥

२६ वें सूत्र की व्याख्या :-

लोक मध्य से ऊपर जोय । नीचे या निरक्षी दिग होय ॥

नभ-प्रदेश की मोघ कतार । श्रेणी बहताही चित्तधार ॥२६॥

परन्तोक आते समय गंतारी जीव की गति :-

मूल :- विग्रहवती च संसारिणः प्राक्चतुर्म्यः ॥२८॥

भाषा :- गति संसारी जीवहि जान ।

चार समय से पहले मान ॥

जो नहि होये सोघ अतीय ।

मोड़ तीन तक लेवे जीय ॥२८॥

बिन मोड़ की गति में समय :-

मूल :- एक समयोऽविग्रहा ॥२९॥

भाषा :- बिन मोड़ों की श्रुतगति लेख ।

मात्र समय लगता है एक ॥२९॥

विग्रहगति में आहारक और अनाहारक का नियम :-

मूल :- एक द्वौ वीन्वाऽनाहारकः ॥३०॥

भाषा - विग्रह-गति जीवहि जब होय ।

अन-आहारक कहिए सोय ॥

द्वक-दो-तीन समय परिमान ।

अधिकाधिक यह गति है जान ॥

सोधा मार्ग जीय जब होय ।

आहारक हो जाये सोय ॥३०॥

३० वें सूत्र की व्याख्या :-

योग्य शरीरहि पुद्गल जान । ग्रहण करे जब जीव न मान ॥

अनाहार सो ही चितधार । अन-आहारक जीव विचार ॥३०॥

:— परं परं सूक्ष्मम् ॥३७॥

१ :— औदारिक तो है साकार ।

सूक्ष्म, सूक्ष्मतर क्रमशः चार ॥३७॥

:—प्रदेशतोऽग्नयेयगुण प्राक् तैजसात् ॥३८॥

॥ :— अधिकाधियय घनतय सु जान् ।

असंख्यात गुने परमान् ॥

पहले से दूजे में कहे ।

दूजे से आहारक लहे ॥३८॥

:— अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अप्रतिघाते ॥४०॥

या :— हैं अनन्तगुन तैजस मांहि ।

अन्तद्व सो क्रम संशय नाहि ॥३९॥

अप्रतिघाती अंतिम दोय ।

अग जग रोक सके ना कोय ॥४०॥

ह पिंड मे अग्नि समान । घुस सकते सर्वत्रहि जान ॥४०॥

तस और कार्मण शरीरों का आत्मा से सबध :—

न :— अनादिसम्बन्धे न ॥४१॥

।या :— तैजस और कार्मण दोय ।

आतम से सम्बंधित सोय ॥

आतम साथ सदा सु अनादि ।

बंध निर्जरा नय सों सादि ॥४१॥

एक जीव के एक साथ कितने शरीर हो सकते हैं :—

मूल :— तदादीनि भज्यानि गुणपदेकस्मिन्ना चतुर्भ्यः ॥४३॥

भाषा :— जीव-शरीर सो निम्न प्रकार ।

द्वय हों या फिर क्रम से चार ॥

‘तैजस’, ‘कामण’ विग्रहगती ।

औदारिक युत आगे गती ॥

चार तभी हों सुनिए नेक ।

‘आहारक’, ‘वैक्रियिक’ में एक ॥

एक साथ नहीं पंच शरीर ।

निविवाद सुनिए धर धीर ॥४३॥

मूल :— निरूपभोगमन्त्यम् ॥४४॥

भाषा :— अथ शरीर प्रथमहि उपभोग ।

अंतिम द्वय में नाहि सुयोग ॥४४॥

मूल :— गर्भ-सम्प्लुतजमाद्यम् ॥४५॥ औपपादिक वैक्रियिकम् ॥४६॥

भाषा :— जन्मे गर्भ, सम्प्लुत जोय ।

सो शरीर औदारिक होय ॥४५॥

जो शरीर जन्मे ‘उपवाद’ ।

होय वैक्रियिक बिन अपवाद ॥४६॥

मूल :— लब्धिप्रत्यय च ॥४७॥ तैजसमपि ॥४८॥

भाषा :— तप से उपजे लब्धि विशेष ।

तासों भी वैक्रियिक अशेष ॥४७॥

लब्धि सहित तैजस है दोय ।

कांति प्रदायक सबमें होय ॥

दूजा तप विशेष से लहे ।

शुभ अथ अशुभ भेद दो कहे ॥४८॥

मूल :- पर पर सूक्ष्मम् ॥३७॥

भाषा :- औदारिक तो है साकार ।

सूक्ष्म, सूक्ष्मतर क्रमशः चार ॥३७॥

मूल :- प्रदेशतोऽसंख्येयगुण प्राक् तैजसात् ॥३८॥

भाषा :- अधिकाधिक्य घनत्व सु जानु ।

असंख्यात गुने परमानु ॥

पहले से बूजे में कहे ।

बूजे से आहारक लहे ॥३८॥

मूल :- अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अप्रतिघाते ॥४०॥

भाषा :- हैं अनन्तगुन तैजस माँहि ।

अन्तहु सो क्रम संशय नाहि ॥३९॥

अप्रतिघाती अंतिम दोय ।

अग जग रोक सके ना कोय ॥४०॥

लोह पिंड में अग्नि समान । घुस सकते सर्वत्रहि जान ॥४०॥

तैजस और कार्मण शरीरों का आत्मा से सबध :-

मूल :- अनादिसम्बन्धे च ॥४१॥

भाषा :- तैजस और कार्मण दोय ।

आतम से सम्बंधित सोय ॥

आतम साय सदा सु अनादि ।

बंध निर्जरा नय सों सादि ॥४१॥

तैजस कार्मण सब जीवों के होते हैं :-

मूल :- सर्वस्य ॥४२॥

भाषा :- तैजस कार्मण अंतिम दोय ।

सब संसारो जीवहि होय ॥४२॥

एक जीव के एक साथ कितने शरीर हो सकते हैं :—

— तदादीनि भज्यानि युगपदेकस्मिन्ना चतुर्भ्यः ॥४३॥

॥— जीव-शरीर सो निम्न प्रकार ।

द्वय हों या फिर क्रम से चार ॥

‘संजस’, ‘कर्मण’ विग्रहगती ।

औदारिक पुत आगे गती ॥

चार तभी हों सुनिए नेक ।

‘आहारक’, ‘वैक्रियिक’ में एक ॥

एक साथ नाहि पंच शरीर ।

निर्विवाद सुनिए घर धीर ॥४३॥

— निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥

॥— त्रय शरीर प्रथमहि उपभोग ।

अंतिम द्वय में नाहि सुयोग ॥४४॥

— गर्भ-सम्पूछनजमाद्यम् ॥४५॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥४६॥

॥— जन्मे गर्भ, सम्पूछन जोय ।

सो शरीर औदारिक होय ॥४५॥

जो शरीर जन्मे ‘उपवाद’ ।

होय वैक्रियिक बिना अपवाद ॥४६॥

— लब्धिप्रत्ययं च ॥४७॥ तत्रैवमपि ॥४८॥

॥— तप से उपजे लब्धि विशेष ।

तासों भी वैक्रियिक अशेष ॥४७॥

लब्धि सहित संजस हूँ दोष ।

कांति प्रदायक सबमें होय ॥

दूजा तप विशेष से लहे ।

शुभ अरु अशुभ भेद दो कहे ॥४८॥



मूल :- परं परं सूक्ष्मम् ॥३७॥

भाषा :- औदारिक तो है साकार ।

सूक्ष्म, सूक्ष्मतर क्रमशः धार ॥३७॥

मूल :- प्रदेशतोऽग्नयेयगुण प्राक् भजमान् ॥३८॥

भाषा :- अधिकाधियय घनतय सु जानु ।

असंस्पृष्ट गुणे परमान् ॥

पहले से दूजे में कहे ।

दूजे से आहारक सहे ॥३८॥

मूल :- अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अप्रतिपाते ॥४०॥

भाषा :- हैं अनन्तगुण तैजस मांहि ।

अन्तर्हू सो क्रम संशय नाहि ॥३९॥

अप्रतिपाती अंतिम दोष ।

अग जग रोक सके ना कोय ॥४०॥

लौह पिंड में अग्नि समान । घुस सकते सर्वत्रहि जान ॥४०॥

तैजस और कार्मण शरीरों का आत्मा से संबंध :-

मूल :- अनादिसम्बन्धे च ॥४१॥

भाषा :- तैजस और कार्मण दोष ।

आत्म से सम्बंधित सोय ॥

आत्म साथ सदा सु अनादि ।

बंध निर्जरा नय सों सादि ॥४१॥

तैजस कार्मण सब जीवों के होते है :-

मूल :- सर्वस्य ॥४२॥

भाषा :- तैजस कार्मण अंतिम दोष ।

सब संसारी जीवहि होय ॥४२॥

## तृतीय अध्याय

इस अध्याय में अधोलोक तथा मध्यलोक का वर्णन किया गया है ।

मूलः—रत्नशर्कराबालुकापङ्क्तु धूमतमोमहातमः प्रभा भूमयो  
घनाम्बुवाताकाश प्रतिष्ठाः सप्ताधोऽध ॥१॥

भाषाः— अधोलोक का वर्णन मुनी ।  
सप्त भूमियाँ नीचे गुनी ॥  
'रत्न', 'शर्करा' पहली दोष ।  
त्रय 'बालुका', 'पङ्क' चव होय ॥  
'धूम', 'तमः' आगे बिस्तार ।  
सप्तम 'महातमः' चित्तधार ॥  
नाम समान प्रभा सब लहें ।  
ताते रत्न-प्रभादिक कहें ॥  
'बलघ-घनोदधिवात' आधार ।  
सो 'घनवात-बलघ' आधार ॥  
यह 'तनुवात-बलघ' से घिरा ।  
अंत अगंताकाशहि निरा ॥१॥

१ ले मूल का बिस्तारः—

इक लख अस्सी योजन मान । रत्नप्रभा है मोटी जान ॥  
कम में कम है आठ हजार । 'महातमः' क्रमश चित्तधार ॥  
एक राजु भीचे लोकान । निम्नय जाने भव्य प्रगांत ॥  
मोटे योजन बीस हजार । तीनों वात-बलघ चित्तधार ॥  
मूँगा रग घनोदधि जान । घनवातहि गो-मूत्र समान ॥  
वान-बलघ-तनु अंतिम जोय । रग अव्यवर्ति ताका होय ॥

रत्नप्रभा आदि भूमियों में नरों की संख्या :—

मूल :—तामु त्रिंशत्पञ्चविंशतिपञ्चदशदशत्रि पञ्चोत्तरनरक—  
गतमहृन्नाणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ॥२॥

भाषा — रत्न प्रभादिक में अब कही ।  
नरकों की संख्या सुन सही ॥  
तीस, पचीस, पन्दरह जान ।  
दस पुनि तीन मुक्रमशः मान ॥  
गिनती सब लाखों में कही ।  
पंच कम लाख छठी में रही ॥  
सप्तम में बस केवल पंच ।  
नरक होहि नहि संशय रंच ॥२॥

नारकीयो का वर्णन :—

मूल :—नारकानित्यशुभतरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविश्रियाः॥

भाषा — देहादिक, लेश्या, परिणाम ।  
सबहि अशुभतर होते काम ॥  
वेदन और अशुभ विक्रिया ।  
नारक जीव महादुख जिया ॥३॥

मूल :—परस्परोद्दीरितदुःखाः ॥४॥

भाषा :— देहि परस्पर दुःख अपार ।  
आपस में ही विविध प्रकार ॥४॥

मूल :-मक्लिष्टामुरोदीरित दुःस्वाश्च प्राक् चतुर्व्याः ॥५॥

भाषा :- तिन्हें लड़ावें पुनि सुन लेव ।  
असुर कुमार कलह प्रिय देव ॥  
तोजी पृथ्वी तक सो जाय ।  
दुख देने के करहि उपाय ॥५॥

नरको की आयु :-

मूल :-तेष्वेक त्रि मप्त-दश-सप्तदश-द्वाविंशति-  
त्रयास्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वाना परा स्थितिः ॥६॥

भाषा :- आयु नरक अब सुनिए सोय ।  
इक, त्रय, सात प्रथम त्रय होय ॥  
दस, सत्रह, बाइस क्रम जान ।  
तेतिस सागर अंतिम मान ॥६॥

६ ठे मूत्र का विस्तार :-

अधिकाधिक मो आयु बताए । कम से कम कहते समझाए ॥  
दस हजार वर्षों की मान । रत्न प्रभा में हानी जान ॥  
अधिकाधिक पहने की जोय । आगे की कम से कम होय ॥  
मह्या आयु निपेक अपार । ज्यों सागर में जल विस्तार ॥  
ताते ही दीर्घायु बखान । करते सागर उपमा जान ॥६॥

मध्य गोरु का वर्णन —

मूल - जम्बू द्वीप-लवणोदधि गुभनामानों द्वीप समुद्रः॥७॥

भाषा — अथ भविजन टुक धरहु दियेरु ।  
 द्वीप अनेक, समुद्र अनेक ॥  
 तिन सब ही के हैं गुभ नाम ।  
 स्थित मध्यलोक सुखधाम ॥  
 जम्बू द्वीप प्रथम चितधार ।  
 नामहि जम्बू वृक्ष आधार, ॥  
 लवणोदधि घेरे है उसे ।  
 ये ही क्रम आगे भी लसे ॥७॥

द्वीप समुद्रों आदि का विस्तार :-

मूल - द्विद्विविष्कम्भाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥८॥

भाषा — क्रम से द्वीप समुद्र विचार ।  
 दुगुन दुगुन जिनका विस्तार ॥  
 घेरे चूड़ी के आकार ।  
 जम्बू द्वीप मध्य चितधार ॥८॥

८ वे सूत्र का विस्तार :-

घेरे जम्बू द्वीप विचार । लवणोदधि जलराशि अपार ॥  
 खड-धातकी पुनि विख्यात । कालोदधि है ता पश्चात ॥  
 जितने द्वीप समुद्रहि जान । आगे दोनों नाम समान ॥  
 अंतिम द्वीप समुद्रहि जोय । नाम 'स्वयम्भूरमणहि' सोय ॥  
 प्रथम द्वीप का जो विस्तार । ताते दूना उदधि विचार ॥  
 दूना द्वीप उदधि सो होय । ता के आगे स्थित जोय ॥८॥

द्वीप का कथन :—

—तन्मध्ये मेरुनामिदं तो योजन शतसहस्रदिशम्भो

जम्बूद्वीप ॥९॥

— गोचं सूर्यं सम जम्बू द्वीप ।

मध्य मेरु गिरि मनहु महीप ॥

जम्बू द्वीप मध्य आकार ।

एक लाख योजन विस्तार ॥६॥

द्वीप के गान क्षेत्र :—

—भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षा

क्षेत्राणि ॥१०॥

— सात क्षेत्र उसमें सुप्रधाम ।

‘भरत’, ‘हैमवत’ आदिक नाम ॥

‘हरि’, ‘विदेह’, ‘रम्यक’ है पंच ।

चित धरिए नहि संशय रच ॥

पट ‘हैरण्यवन’ हि है कहा ।

अरु ‘ऐरावत’ सप्तम रहा ॥१०॥

बै मूत्र का विस्तार :—

क्षेत्र उत्तर हिमवान । नवण समुद्र दिशा त्रय जान ॥

सिन्धु नदी मनुहार । गाम्भीर्यमस्तहि क्षेत्र भंडार ॥

विषयार्थ मध्य गोमार । उत्तर-दक्षिण बनाए ॥

क्षेत्र पट भाग विशेष है ॥

करण का कारण भीत, वे तीन ॥

विषय बड़ी की ॥



निपघ, नील पर्वत त्रिविध जान । शीघ्र विदेह अस्थित मान ॥  
 कर्मनाश में तत्पर जान । मानव रहहि विदेह समान ॥  
 ताते शीघ्र विदेह कहाए । मध्यभाग गिरि मेह मुहाए ॥  
 शत-सहस्र योजन विस्तार । ता में भूतल एक हजार ॥  
 मेह गिरी पर हैं वन चार । 'भद्रशाल', 'नन्दन' चिनघार ॥  
 'सौमनस' हि पुनि 'पांडुक' जान । मेह शिखर ता मध्य बतान ॥  
 चार शिला चब दिश मनुहार । तिन ऊपर सिंहासन चार ॥  
 तीर्थंकर अभिषेक कराए । देव मन हि मन में हर्षाए ॥  
 भविजन सो सक्षिप्त विचार । आपम में पढ़िए विस्तार ॥१०॥

जम्बू द्वीप के सात क्षेत्रों का वर्णन करने वाले छः पर्वत :-  
 मूल :-तद्विभाजिनः पूर्वपरायता हिमवन्महाहिमवन्निपघ-नील-  
 रुक्मि-शिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥११॥

भाषा:- सप्त विभाग सकल मुख साज ।  
 सीमांकन करते गिरिराज ॥  
 पूरब से पश्चिम तक जात ।  
 नाम 'वर्षधर' भी ब्रह्मात ॥  
 पहला पर्वत है 'हिमवान' ।  
 दूजा सोइ 'महाहिमवान' ॥  
 'निपघ' 'नील' 'रुक्मी' पुनि कहा ।  
 'शिखरी' नाम छठे ने लहा ॥११॥

नदियों का वर्णन :—

मूत्र :—गङ्गा-सिन्धु-रोहिद्-रोहितास्या-हरिद्-हरिकान्ता-गीता-  
सीतोदा नारीनरकांता-गुडर्ण-हृष्यकूला-रक्ता-रक्तीदा-  
गरितस्तन्मध्यगाः ॥२०॥

भाषा :—सप्त क्षेत्र की नदियाँ गुनो ।  
गंगा-सिन्धु प्रथम की गुनो ॥  
दूजे की 'रोहित-रोहितास्य' ।  
'हरित' सु 'हरिकान्ता' पुनि लास्य ॥  
'सीता', 'सीतोदा' चय बहें ।  
'नारी' 'नरकांता' पंच सहें  
'हृष्य-हृष्यकूला' षट कहीं  
'रक्ता-रक्तीदा' सत बहों



इन नालाघो का विस्तार :—

मूल :—प्रथमो योजन महस्यायामम्बदक्षं दिक्कम्भा हृदः ॥१५॥

भाषा:— लम्बाई हृद पञ्च विचार ।  
 पूरव पश्चिम एक हजार ॥  
 उत्तर दक्षिण चौड़ा जान ।  
 पंच शतक योजन परमान ॥

मूल :—दश योजनावगाहः ॥१६॥ तन्मध्ये योजन पुष्करम् ॥१७॥

भाषा:— दस योजन सो गहरा कहा ।  
 बीच कमल इक योजन लहा ॥१६ व १७॥

हृदो और कमलों का आकार :—

मूल :—तद्द्विगुण-द्विगुणा हृदा पुष्कराणि च ॥१८॥

भाषा:— कमल सरोवर आगे जोय ।  
 दुगुन दुगुन विस्तृत हैं सोय ॥१८॥

इन कमलों पर निवास करने वाली देवियों :—

मूल :—तन्निवासिन्यो देव्यः श्री-ह्री-धृति-कीर्ति-बुद्धि-लक्ष्म्यः  
 पद्मोपमस्त्रियतयः ससामानिकपरिपत्काः ॥१९॥

भाषा:— उन कमलों पर भव्य निवास ।  
 जिनमें छँ देविन के वास ॥  
 'श्री', 'ह्री', 'धृति' आदिक हैं नाम ।  
 'कीर्ति', 'बुद्धि', 'लक्ष्मी' सुखधाम ॥  
 एक पद्म की आसू लहें ।  
 सामानिक, परिपद् संग रहें ॥१९॥

मूल :—भरनेरावतयोवूँ दिहासो पट् ममवाभ्यामुत्सविण्यव-  
रापिगोभ्याम् ॥२७॥

भाषा :— भरतहि, ऐरावतहि विचार ।  
आपु आदि घट बढ पितधार ॥  
उत् अद अवसविणीनुसार ।  
छै ममयोँ में विविध प्रकार ॥२७॥

२७वें सूत्र की व्याख्या :—  
मुत्र घटता ही जाए विचार । बढ़ना जावे दुःख अपार ॥  
अवसविणी वाञ्छ सो जान । उत्सविणी विलोमहि मान ॥  
'मुपमा-मुपमा' सुपमा' होय । 'मुपमा-दुपमा' तीव्रा होय ॥  
'मुपमा-मुपमा' चोया जान । 'दुपमा' पंचम भेद बरान ॥  
'दुपमा-दुपमा' अवसविणी । इनके उल्टे उत्सविणी ॥  
इनमें मुत्र बढ़ता ही जाए । जमनः सब दुःख जाए विलाए ॥२७॥

शेष श्लोको की दशा :—

मूल :—ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिता ॥२८॥

भाषा :— छोड़ भरत, ऐरावत मही ।  
हानि वृद्धि नहि होती कहीं ॥  
एक समान दशा ही रहे ।

मूल :- चतुर्दश-नदी-सहस्र-परिवृता-गङ्गा सिन्धवादयो नद्यः ॥२३॥

भाषा :- गंगा-सिन्धु नदी परिवार ।

चौदह चौदह सोइ हजार ॥

दुगुन-दुगुन आगे क्रम जान ।

घेरे नदियां निश्चय मान ॥२३॥

भारत क्षेत्र का वर्णन :-

मूल :- भरतः पञ्चविंशति-पञ्चयोजन-शत-विस्तारः

पञ्चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥२४॥

भाषा :- भरत क्षेत्र विस्तृत घर शीत ।

योजन पंच शतक छब्बीस ॥

कर योजन के उन्नित भाग ।

योग करहु ता के छं भाग ॥२४॥

मूल :- तद्-द्विगुण-द्विगुण-विस्तारा वषंधर-वर्षा विदेहान्ताः ॥२५॥

भाषा :- दक्षिण पर्यंत क्षेत्र विचार ।

क्रमशः दुगुन दुगुन विस्तार ॥

सो क्रम है विदेह पर्यन्त ।

संशय तनिक न मार्गे संत ॥२५॥

मूल :- उत्तर दक्षिणतुल्याः ॥२६॥

भाषा :- उत्तर के गिरि क्षेत्र विचार ।

दक्षिण हो सम हैं विस्तार ॥२६॥

घातकी खड द्वीप की रचना :—

मूल :—द्विर्घातकीखण्डे ॥३३॥

भाषा :— क्षेत्र भरत आदिक हैं जोय ।

खंड-घातकी दो दो होंय ॥३३॥

पुष्कर द्वीप का वर्णन :—

मूल :—पुष्करार्धे च ॥३४॥

भाषा :— दो दो पर्वत द्वीप विचार

आधे पुष्कर द्वीप मंसार

आधे पुष्कर द्वीप में ही भरत आदि क्षेत्र बयो

मूल :—प्राड् मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥३५॥

भाषा :— कारण सो सुनिए घर ध्यान

मानुषोत्तर गिरि तक जान

मानव का ही है आवास

द्वीप-अढ़ाई करहि निवास

मनुष्यों के दो भेद :—

मूल :—आर्या म्लेच्छाश्च ॥३६॥

भाषा :— मानव के दो भेद बताए

प्रथम आर्य पुनि म्लेच्छ कहा

भूमिगो वा वर्णन :-

-भर्तृराजन-विदेहा. गर्भभूमिगोऽयम् देवदुस्तरकुम्भम् ॥३॥

॥:- पंच भरत, ऐरायत पंच ।  
पंच विदेह न संशय रंच ॥  
पंद्रह कर्मभूमिर्मा कहीं ।  
द्योड़ 'देव-उत्तरकुम्भ' मही ॥३७॥

प्यो की आयु :-

:-नृस्थिती परावरे त्रिपत्योपमान्तमुं हर्ते ॥३८॥  
॥:- मानव आयु कही सो सुनो ।  
उत्कृष्ट अरु जघन्यतम पुनो ॥  
तीन पत्य अधिकाधिक जान ।  
अन्तमुं हर्ते न्यूनतम मान ॥३९॥

ऽर्चो की स्थिति :-

:-तिर्यग्योनिजानां च ॥४०॥  
॥:- तिर्यऽर्चो की स्थिति यही ।  
मानव की जो पहले कही ॥४१॥

(तीसरा अध्याय समाप्त)

अध्याय :- देवायतनतुलिकायाः ॥१॥

भाषा :- देवों के हैं चार निकाय ।  
प्रथम 'मवनवासी' यतलाय ॥  
'ध्यन्तर' पुनि 'ज्योतिष्क' गुहाय ।  
'धैमानिक' अंतिम कहलाय ॥१॥

मूल :- आदिनस्त्रिषु पीताम्नतेश्च ॥२॥

भाषा :- आदि देव प्रथ, तेश्च भीत ।  
पृष्ठ, नील, वायोतहि, भीत ॥२॥

चार प्रकार के देवों के अमान्न भेद :-

मूल :- द्वाष्ट-यज्य-द्वादशविश्वानाः कल्पोपपन्नपयन्ताः ॥३॥

भाषा :- देव 'मवनवासी' इस रहे ।  
आठ भेद 'ध्यन्तर' के रहे ॥

देव 'ज्योतिषी' पाँच प्रकार ।

'धैमानिक' बारह चित्तपार ॥

अंतिम कल्पोपन्न पयन्त ।

मोलह - ३ मन्त्र ॥३॥

देवों के विषय में विशेष कथन :-

मूल - इन्द्र-सामानिक-त्रायस्त्रिंश-परिषद्-आ-  
लानीक-प्रकीर्णक-आभिषोध्य-कित्वपिक

भाषा :- देवन भेद प्रत्येक निका  
निम्न प्रकार कहे समझाय  
'इन्द्र' प्रदि अणिमादिक यु  
'सामानिक' आदर संयुक्त  
'त्रायस्त्रिंश' प्रोहित सम जा  
'परिषद्' इन्द्र समासद मान  
'आत्मरक्ष' पंचम सुखदा  
रक्षा हेतु मनहु शोमा  
'लोकपाल' वट, सप्त 'अनीव  
'प्रकीर्णक' पुरजन हि प्रतीक  
'आभिषोध्य' सेयक सम जा  
'कित्वपिक' हि चांडाल सम

ये मूल की व्याख्या :-

तैत्तिम प्रोहित सम यत्नाए । ता सो 'त्राय  
करे घनादिक रक्षा ओष । 'लोकपाल'

पूर्व कथन में अपवाद :-

मूल :- त्रार्यस्त्रिंश लोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ॥५॥

भाषा :- 'व्यन्तर', 'ज्योतिष्कहिं' नहिं होय ।

लोकपाल, त्रार्यस्त्रिंश दीय ॥५॥

इन्द्र का नियम :-

मूल :- पूर्वयोर्द्विन्द्राः ॥६॥

भाषा :- प्रथम निकाय कहीं जो दीय ।

दो-दो इन्द्र दुहुन मा होय ॥६॥

बीस 'भवन-दासी' यो भये । सोलह इन्द्र सु 'व्यन्तर' लहे ॥६॥

देवों में कामेच्छा की पूति :-

मूल :- काय प्रवीचारा आ ऐशानात् ॥७॥

भाषा :- काम-भाव 'प्रविचार' बखान ।

प्रथम तीन देवन में मान ॥

साय देव सीधर्मोशान ।

काय रमण भानव सम जान ॥७॥



मूल :—शेषाः स्पर्श-रूप-शब्द-मनः प्रविचाराः ॥८॥

भाषा :— क्रमशः सूक्ष्म लहें प्रविचार ।

शेष देव नौ निम्न प्रकार ॥

स्पर्श, रूप, शब्दहि, मन, लाय ।

शांत कामना सब हो जाय ॥८॥

९वें सूत्र की व्याख्या :—

स्वर्गं महेन्द्र हि सनतकुमार । आतिगन ही है प्रविचार ॥

ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, सातव मान । अरु कापिष्ट स्वर्ग में जान ॥

प्रविचारहि का ढग अनूप । शांत काम हो लख कर रूप ॥

शुक, महामुनहि, सातार । चौथा स्वर्ग कहा महत्कार ॥

शांत कामना होती भीत । सुनकर मिष्ट वचन अरु गीत ॥

आनत, प्राणत, आरण मान । चौथा अच्युत स्वर्ग बखान ॥

काम व्यथा सब हो मिट जाए । केवल मन में चितन लाए ॥

परम तुष्टि सब ही की होय । देविन के मन भावे सोय ॥८॥

मूल :—परेऽप्रविचाराः ॥९॥

भाषा :— सोलह स्वर्गों से जो परे ।

काम तिन्हें नहि व्याकुलकरे ॥९॥

१०वें सूत्र की व्याख्या :—

नो ग्रंथेयक पढ़ने मान । पुनि नो अनुदिश आदिक जान ॥

पांच अनुत्तर में भी सोय । काम वेदना तनिक न होय ॥

देविन का है पूर्ण अभाव । यों नहि काम पूर्ण हो भाव ॥

काम अभावहि कारण जान । परम मुनी सों देव बखान ॥९॥

भवनवासी देवों के दस भेद :—

मूल :—भवनवागिनोऽमुर-नाग-विद्युत-गुपर्वाग्नि-

वात-स्तनिनांशधि-द्वीप-दिवकुमारः ॥१०॥

भाषा :— भेद भवनवासी दस मान ।

‘अमुर’, ‘नाग’ पुनि विद्युत जान ॥

घष ‘गुपर्ण’, घष ‘अग्निकुमार’ ।

‘वात’, ‘स्तनित’, ‘उदधि’ घितघोर ॥

‘द्वीप’ अद दिवकुमार वस कहे ।

नाम कुमार सभी ने सहे ॥१०॥

१०वें सूत्र की व्याख्या :—

एक अवस्था में चितधार । रहहि देव आजन्म कुमार ॥

देव भवनवासिन में मान । सो गुण अधिष्ठाधिक है जान ॥

रहन-सहन में पूर्ण कुमार । सोइ कुमार कहें चितधार ॥

रत्नप्रभा पृथ्वी-मनुहार । पद्म-यह्न में अमुर कुमार ॥

देवन के हैं भवन गन्धाम । नी के सर भागहि में धाम ॥

भवनों में ही सो सब रहे । देव भवनवासी यों कहें ॥१०॥

व्यंर देवों के आठ भेद :-

मूल - व्यंगराः किन्नर-किम्पुदप-महोरग-गंधर्व-यक्ष  
राक्षस-भूत-पिशाचाः ॥११॥

भाषा :- व्यंतर रहहि विभिन्न स्थान ।

आठ प्रकार सुनिश्चित जान ॥

‘किन्नर’, ‘किम्पुदप’ हि हैं दोय ।

और ‘महोरग’ तीजा होय ॥

चव ‘गंधर्व’, ‘यक्ष’ ही पंच ।

‘राक्षस’, ‘भूत’, ‘पिशाच’ हि चंच ॥११॥

११वें सूत्र का विस्तार :-

भूतल पर भी करहि निवास । ग्राम नगर चौराहा वास ॥

मंदिर, उद्यानादिक मान । मे भी ‘व्यंर’ रहते जान ॥११॥

ज्योतिष्क देवों के भेद :-

मूल - ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रह-नक्षत्र-प्रकीर्णक-तारकाश्च  
॥१२॥

भाषा :- ‘ज्योतिष्क’ हि के पांच प्रकार ।

‘नाम चमक फारण चित्तधार ॥

‘सूर्य’ ‘चन्द्रमा’ ‘ग्रह’ ‘नक्षत्र’ ।

पंचम ‘तारे’ हैं सर्वत्र ॥१२॥

१२वें मूत्र का विस्तार :—

सू मे तारे योजन मान । सात शतक और नम्ये जान ॥  
 सूर्य, चन्द्र, ग्रह आदिक जोय । ऊपर-ऊपर स्थित सोय ॥  
 एक शतक दम योजन मोहि । देव ज्योतिषी मलय नाहि ॥  
 वात-वलय-पनउदधि भँझार । तब सो पँचे हूँ चित्तपार ॥  
 सूर्य चन्द्र ही इन्द्र समान । ज्योतिष्क हिँ देवों में जान ॥१२॥

मूल :—मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥१३॥

भाषा :— नित प्रदक्षिणा मेरुहि करें ।

दाई द्वीप का सामस हरे ॥१३॥

१३वें मूत्र की व्याख्या :—

दाई द्वीप अरु सागर दोय । मानव लोक यहीं तक होय ॥  
 ता के देव ज्योतिषी जान । मेरु प्रदक्षिण दें नित मान ॥  
 ग्यारह सौ योजन रह दूर । दें प्रवास मानव भरपूर ॥१३॥

मूल :—तत्कृत्तः काल विभागः ॥१४॥

भाषा :— ज्योतिष-देवन-गति आधार ।

काल विभाग किए व्यवहार ॥१४॥

१४वें मूत्र की व्याख्या :—

घटा, मिनट, पड़ी, दिन, रात । व्यवहारहिँ सो काल बहात ॥  
 बोध ताहिँ सौ निश्चय काल । ता गुणिगता आगे हाल ॥१४॥

मूल :—बहिरवस्थिताः ॥१५॥

भाषा :— मानव लोक परे गतिहीन ।

नाम 'अवस्थित' ताते दीन ॥१५॥

वैमानिक देवों का वर्णन :—

मूल :—वैमानिकाः ॥१६॥

कल्पोपन्नाः कल्पातीतारश्च ॥१७॥

भाषा :— देव भेद वैमानिक मोत ।

'कल्पोपन्न' अरु 'कल्पातीत' ॥१६ व १७॥

१६वें तथा १७वें सूत्र की व्याख्या :—

पुण्यवान जेह जीवहि जान । कहलावे सो जगह विमान ॥

जन्म तहाँ जो लेये विचार । वैमानिक सो ही चितधार ॥

जिनमें रहना पुण्य कहाय । सो विमान त्रय भेद बताए ॥

मध्य इन्द्र सम 'इन्द्रक' जान । श्रेणिबद्ध चहुँ 'श्रेणि' विमान ॥

विदिशाओं में पुण्य समाग । 'पुण्यप्रकीर्णक' वितरे यान ॥

दस प्रकार इन्द्रादिक जोय । 'कल्पोपन्न' कहावें सोय ॥

सोलह स्वर्ग परे गुन लेव । सब 'अहमिन्द्र' कहावें देव

॥१६ व १७॥

मूल :—उपपुं परि ॥१८॥

भाषा :— कल्प कहो या सोलह स्वर्ग ।

स्थित हैं क्रमशः अपयगं ॥१८॥

सोलह स्वर्गों का वर्णन :-

मूल :- सौधर्मेशान-सानत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर - लान्तव  
कापिष्ठ-शुक्र-महाशुक्र-शतार-सहस्रारेष्वानत - प्राणतयो-  
रारणाच्युतयानं वसु ग्रंवेयकेषु विजय-वैजयन्त-जयन्तः  
पराजितेषु सर्वार्यसिद्धौ च ॥१९॥

भाषा :- सोलह स्वर्ग-प्रथम 'सौधर्म' ।  
पुनि 'ऐशान' गुनहु चित मर्म ॥  
'सनत्कुमार' 'माहेन्द्र' बताए ।  
'ब्रह्म' सु 'ब्रह्मोत्तर' सुखदाए ॥  
सप्त 'लान्तव', अष्ट 'कापिष्ठ' ।  
'शुक्र' 'महाशुक्र' हि हैं इष्ट ॥  
पुनि 'शतार' द्वादस 'सहस्रार' ।  
'आनत', 'प्राणत' आदि विचार ॥  
'आरण', 'अच्युत' अंतिम मान ।  
क्रम से सोलह स्वर्ग सु जान ॥  
ता पर नो ग्रंवेयक कहें ।  
नो अनुदिश आदिक भी रहें ॥  
रहें 'विजय' 'वैजयन्त' 'जयन्त' ।  
'अपराजित' चव मानें संत ॥  
पुनि 'सर्वार्यसिद्धि' ही मान ।  
पच विमान अनुत्तर जान ॥  
धर्मानिक तहें करहि निवास ।  
भाति-भाति सुख बिना प्रयास ॥१९॥

२२वें सूत्र की व्याख्या :—

तीव्र वैर, क्रोधादिक, बलेश । लेश्या कृष्ण न संशय लेश ॥  
 भाया, तृष्णादिक, अतिमान । नीलहि लेश्या की पहिचान ॥  
 आत्म-प्रशंसादिक ही भाए । सो कपोत लेश्या कहलाए ॥  
 दया, दान, सत्यादिक मीत । लक्षण हैं सो लेश्या पीत ॥  
 क्षमा, दयादिक, सात्विक दान । पद्महि लेश्या लक्षण जान ॥  
 वीतराग, पर दोष भुलाए । शुक्लहि लेश्या सो कहलाए ॥  
 नाम कर्म वश रंग शरीर । द्रव्यहि लेश्या सो गुणधीर ॥  
 हों कषाय वश मन-वच-काय । भाव हि लेश्या सो कहलाए ॥२२॥

कल्प किसे कहते हैं :—

मूल :—प्राग्भवेयकेभ्यः कल्पाः ॥२३॥

भाषा :— स्वर्गादिक प्राग्भवेयक पूर्व ।

इन्द्र सहित सो 'कल्प' अपूर्व ॥२३॥

२३वें सूत्र का विस्तार :—

प्रथमहि से सोलह तक जान । स्वर्गों में ही इन्द्र बखान ॥  
 प्राग्भवेयक, अनुदिश पुनि जाय । ओर अनुत्तर इन्द्र न होय ॥  
 'सोलह स्वर्ग परे बनलाई । सत्रहि देव 'अहमिन्द्र' कहाए ॥२३॥

लौकान्तिक देवों का वर्णन :-

मूल :- ब्रह्मलोकानया लौकान्तिकाः ॥२४॥

भाषा :- ब्रह्मलोक में रहते मान ।

लौकान्तिक सो निश्चय जान ॥

एक जन्म से मुक्तो सहें ।

ताते ही लौकान्तिक कहें ॥२४॥

लौकान्तिक देवों के भेद :-

मूल :- सारस्वतादित्य-ब्रह्मयदण-गर्दंतोय-तुपिता व्यावाधा-

रिष्टाश्च ॥२५॥

भाषा :- लौकान्तिक के सुनिए भेद ।

ऊँच-नीच का नाहि विभेद ॥

‘सारस्वत’, ‘आदित्य’ विचार ।

‘ब्रह्म’ ‘अदण’ क्रमशः चित्तधार ॥

‘गर्दंतोय’ पुनि ‘तुपित’ कहाय ।

‘व्यावाध’ , ‘अरिष्ट’ सुहाय ॥२५॥

२५वें सूत्र की व्याख्या :-

इन्द्रादिक के नाहि अधीन । विषय विरक्त देव स्वाधीन ॥

ता सों ये देवपि कहाएँ । पाठी छोड़हु पूर्व बताएँ ॥

सो वैराग्य समय सुखदाय । तीर्थंकर प्रतिबोधहि जाय ॥

अधिकाधिक सत्या में मान । दो-दो क्रमशः जदपि समान ॥

सात-सात सो प्रथम सहत । ग्यारह सहसहि-ग्यारह अंत ॥२५॥



द्वि चर्म देवो का वर्णन :-

मूल :- विजयादिषु द्विचरमाः ॥२६॥

भाषा :- नौ अनुविश, विजयादिक चार ।

ता के देव 'द्वि.चर्म' विचार ॥२६॥

२६वे सूत्र की व्याख्या :-

विजयादिक से भूतल आए । पुनि सयम धर ऊपर जाए ॥  
पुन- वहाँ से नर भव धरें । मुक्ति रमा को तब जा वरें ॥  
दो मानव भव धरते मान । मोक्ष प्राप्त करते तब जान ॥  
पर सर्वार्थ सिद्धि के देव । एक चरम होते चित लेव ॥२६॥

तिर्यञ्चों की पहिचान :-

मूल :- औपपादिक-गुणेभ्य शेपास्तिर्यग्योनयः ॥२७॥

भाषा :- जन्मुपदाय नारकी, देव ।

अर मानय तजि शेपहि लेव ॥

जीव सोइ तिर्यञ्च हि मान ।

सय सोनों में स्थित जान ॥२७॥

देवों की आयु का वर्णन :-

मूल :- स्थितिरगुरनाग-गुपणं-द्वीप-शेपाणा सागरोपम  
त्रिपत्योपमाद्वहीनमिता ॥२८॥

भाषा :- आयु भवनवासिन की कहौ ।

अमुरकुमारिक सागर सहौ ॥

नाग कुमारों की त्रय पत्य ।

और गुपणं अढ़ाई पत्य ॥

आयु पत्य दो द्वीप कुमार ।

बेड़ पत्य तक शेष विचार ॥२८॥

गौधरी जी! प्रियतम स्वर्ग के देवों की आज्ञा :-

ଦୁମ :- ନୀଳବର୍ଣ୍ଣଜନନୀ: କାନ୍ତାରୀବତୀ ଉଦିତେ ॥୨୧॥

भाषा :— आर्य समाज शोधमैदान ।

बुद्ध बहो डो सागर परमान ॥२६॥

**प्रमाण: धर्म के दृष्टान्तों की भाषा :-**

श्रुतः—गान्धर्वस्यार-याज्ञेयः सप्त ॥३०॥

भाषा :- तानन कुमार, महोदय हि ज्ञान ।

तानिह. अद्रिह. मल सागर मान॥३०॥

सूच :- वि.सूच.नं. ११११.११११.११११.११११.

भिरप्रियङ्गुनि शु ॥३६॥

भाषा :— दोग सात में आधु विघट ।

द्वादशा स्वर्गं शेषं चित्तपार ।।

हीन, सात, मी, ग्याह ज्ञान ।

तेषां पञ्चदश धर्मैः मान ॥३१॥

११३ मूत्र की व्याख्या :-

ਦੀ-ਦੀ ਸਥਾਨਾਂ ਤੋਂ ਜਾਂਦੀ ਹੋਵੇ । ਦਰ, ਘੋਰਦਰ, ਲੋਮਦਰ ਅਫਿ ਲੋਵ ।।

बहुधाह गान्धर्व कृति कही । . . . . . गय ही में रही ॥

परिचय भाग का ...

वस्पातीत देवों की आयु :-

मूल :- आरणाव्युतादूर्ध्वमकैकेन नवमु ग्रैवेयेषु विजयादिषु  
सर्वार्थसिद्धौ च ॥३२॥

भाषा :- नी ग्रैवेयक आयु प्रसिद्ध ।

एक-एक सागर क्रम वृद्धि ॥

आरण, अव्युत से है कहो ।

तेइस से इकतिम तक रही ॥

इक बड़ है अनुविश हि विमान ।

बतिम सागर सो ही जान ॥

विजयादिक छव में इक वृद्धि ।

सैनिम ही 'सर्वार्थ हि सिद्धि' ॥३२॥

वैमानिक देवों की जघन्य आयु :-

मूल :- धारा पण्योपममधिरम् ॥३३॥

भाषा :- आयु जघन्य स्वर्ग हो जान ।

कुछ बड़ एक पण्य से मान ॥३३॥

मूल :- वरुण वरुण पूर्वा पूर्वाभ्यन्तरा ॥३४॥

भाषा :- नीचे की अधिकाधिक ओष ।

ता ऊपर कम से कम होय ॥३४॥

१४वें मूल की व्याख्या :-

कुछ बड़ से सागर पारमान । अधिकाधिक मोचमें देखाव ॥

बल-बलान्तर मंडलमें मंडल । देव आयु कम से कम होय ॥

कैसे से कम आयु की ----- दृष्ट होय मात्र ॥३४॥



द्रव्यों के बारे में विशेष कथन :—

मूल :—नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥४॥

भाषा :— 'नित्य' 'अवस्थित' सब ही मान ।

पुद्गल छोड़ अरूपी जान ॥४॥

दो प्रकार गुण सब में मान्य । प्रथम विशेष पुनः सामान्य  
गुण विशेष गति होय सहाय । अस्तित्व हि सामान्य बताय  
धर्म द्रव्य गुण सो चित्तधार । दो-दो सबमें इसी प्रकार  
द्रव्य गुणों का नाश न होय । ता से 'नित्य' कहावें सोय  
छे सत्ता नहि घट-बढ़ जान । द्रव्य 'अवस्थित' सो ही मान  
पुद्गल रूपी, है गुण चार । अन्य अरूपी सब चित्तधार ॥४॥  
पुद्गल द्रव्य रूपी हैं :—

मूल :—रूपिणः पुद्गलाः ॥५॥

भाषा :— केवल पुद्गल रूपी कहे ।

रस-स्पर्श गंधादिक सहे ॥५॥

धर्मादि द्रव्य बहुत नहीं हैं —

मूल :—आ आकाशादेवद्रव्याणि ॥६॥

भाषा :— 'धर्म', 'अधर्म', 'अकार' हि एक ।

तीन द्रव्य जो शेष—अनेक ॥६॥

पुद्गल, जीव अनन्तानन्त । अगम्यान् अणु काल सहज  
गोराकाश असंख्य प्रदेश । हर पर दिन कालाणू एक ॥६॥

मूल :—निमित्तानि च ॥७॥

भाषा :— 'धर्म', 'अधर्म' 'अकार' हि तीन ।

हवन घटन विन त्रिया विहीन ॥७॥

बन्ध भेद भी गुनि, दोष । 'वेद्यनिष्ठ' हि प्रायोगिक होय ॥  
 मियाथ कलमिन् के रसदेव । बादल, विद्युत् प्रथमहि मेव ॥  
 पुष्प दल 'प्रायोगिक' मान । गा के गुनि दो भेद बगान ॥  
 बंध असीध-असीध हि दूज । बाण्ड-नाथ मिन बंध भवेक ॥  
 जीव-प्रतीति दूजा ज्ञान । ज्ञान्य कर्म के बंध गमान ॥  
 रघुन मूढमान होहि विचार । लखने अधिक प्रथम विचार ॥  
 दूजा ज्ञानेधिक बहनाए । डेर डेर में दूधम बहाए ॥  
 'गमयान' भवस भावार । गो भी होना होहि प्रकार ॥  
 'दण्ड लक्षण' पहना ज्ञान । लम्बा, चौड़ा भादि बगान ॥  
 कर बसना रहे बहप्य । मोड़ 'अनिष्ट' लक्षण' लप्य ॥  
 लंद पुद्गल हि 'भेद' बगान । बाण्ड मुगल 'उत्तर' ज्ञान ॥  
 भाटा भारिक 'बूझ' बहाए । पट के दुबड़े 'गंठ' बहाए ॥  
 दान-चोल् 'बुद्धि' विचार । 'प्रवर' मेर पटमहि विचार ॥  
 लोह-गुनि 'अनु-चटन' बहाए । मों दूबड़े पट भेर बगान ॥  
 अग्यहार ही 'वेम' बहाए । 'धामा' के दो भेद बहाए ॥  
 जग की लल रंग में होय । पूज भादि गो गारा होय ॥  
 गुन प्रकाश हि 'भातर' होय । जीवन बंध प्रमाण 'उत्ती' ॥२४॥  
 पुद्गल के भेद :—

मूल :—अनवरः स्वभावात् ॥२३॥

भाषा :— पुद्गल के दो भेद बताए ।

'परमाणु', 'स्कन्ध' बहाए ॥

अणु अविभागी एक प्रदेश ।

एकाधिक 'स्कन्ध' विरोध ॥२४॥

खट्टा, मीठा, कड़ुवा जान । तीता और कसैला मान ॥  
 रसहि पच सो, दो हैं गंध । नाम सुगंध और दुर्गंध ॥  
 काला, नीला, लाल, सफेद । पंचम पीत वर्ण के भेद ॥  
 मूल वर्ण सो केवल पच । बहु प्रभेद नहि सशय रंच ॥२३॥

पुद्गल द्रव्य की मुख्य १० पर्याय :—

मूल .—शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्छायातपो-  
 द्योतवन्तश्च ॥२४॥

भाषा :— सज्जन घृन्द सुनहु अब नेक ।  
 पुद्गल की पर्याय अनेक ॥  
 'शब्द' 'बन्ध' 'सौक्ष्म्य' बताए ।  
 पुनि—'स्थौल्य' 'संस्थान' कहाए ॥  
 'भेद' और 'तम' 'छाया' मान ।  
 'आतप' अरु 'उद्योतहि' जान ॥२४॥

२४वें सूत्र की व्याख्या :—

शब्द भेद दो होहि अनूप । भाषा और अभाषा रूप ॥  
 भाषा पुनि दो रूप बस्तान । अक्षर और अनक्षर जानें ॥  
 मानव सब करते व्यवहार । भाषा अक्षर रूप विचार ॥  
 पशु पक्षि की बोली जोय । भाषा, अन्-अक्षर है सोय ॥  
 रूप अभाषा शब्दद्वे दोय । पुरुष प्रत्य 'प्रायोगिक' होय ॥  
 मेष-गर्जन आदिक जान । 'स्वाभाविक' नैसर्गिक मान ॥  
 प्रायोगिक पुनि चार प्रकार । वाय चाम के 'तत' चित्तधार ॥  
 तार आदि के साजे जोय । 'वितत' नाम ही तिनका होय ॥  
 घटा आदिक 'घन' कहलाए । बशी आदि 'गुप्तिर' मन भाए ॥

[illegible]

४३—अथवा, अथवापुनः ॥३॥

उदा:- पुरुष के दो भेद बताए।

‘शरणापू’, ‘शरणप’ शहापू ॥

अथ अविभागी एव प्रदेशः ।

एतापि न 'सक्य' विशेष ॥२५॥



खट्टा, मोठा, कटुवा जान । तीता और कसैला मान ॥  
 रसहि पंच सो, दो हैं गंध । नाम सुगंध और दुर्गंध ॥  
 काला, नीला, लाल, सफेद । पंचम पीत वर्ण के भेद ॥  
 मूल वर्ण सो केवल पंच । बहु प्रभेद नहि संशय रच ॥२३॥

पुद्गल द्रव्य की मुख्य १० पर्याय :—

मूल :—शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थूल्य-संस्थान-भेद-तमश्छायातपो-  
 द्योतवन्तश्च ॥२४॥

भाषा :— सज्जन घृन्द सुनहु अब नेक ।  
 पुद्गल की पर्याय अनेक ॥  
 'शब्द' 'बन्ध' 'सौक्ष्म्य' बताए ।  
 पुनि-'स्थूल्य' 'संस्थान' कहाए ॥  
 'भेद' और 'तम' 'छाया' मान ।  
 'आतप' अरु 'उद्योतहि' जान ॥२४॥

२४वें सूत्र की व्याख्या :—

शब्द भेद दो होहि अनूप । भाषा और अभाषा रूप ॥  
 भाषा पुनि दो रूप बतान । अक्षर और अनक्षर जानें ॥  
 मानव सब करते व्यवहार । भाषा अक्षर रूप विचार ॥  
 पशु-पक्षि की बोली जोय । भाषा, अन्-अक्षर है सोय ॥  
 रूप अभाषा शब्दहुँ दोय । पुरुष यत्न 'प्रायोगिक' होय ॥  
 मेष-गर्जना आदिक जान । 'स्वाभाविक' नैसर्गिक मान ॥  
 प्रायोगिक पुनि चार प्रकार । वाद्य धाम के 'तत' चितधार ॥  
 तार आदि के शान्ते जोय । 'वितत' नाम ही तिनका होय ॥  
 घटा आदिक 'मन' कहलाए । बची आदि 'गुप्तिर' मन भाए ॥

बल भेद भी सुनिष् होय । 'वैमर्षिक' हि प्रयोगिक होय ॥  
 विमर्ष कल्पविष के रसमेव । वादक, विदुर प्रत्यभि मेव ॥  
 पुनः यत्र 'प्रयोगिक' मान । गो के पुन दो भेद बखान ॥  
 बध अजीव-अजीव हि हूँ । वादक मान मिल अब भेद ॥  
 अजीव-अजीवहि दूखा मान । अल्प बर्ष के बध समान ॥  
 समुद्र पुनमान दोहि विचार । मरने अनिक प्रलय विचार ॥  
 दूखा कायेधिक बहताए । देह देह मे दूरय बहाए ॥  
 'मरणा' अमर माना । गो भी जीव दोहि प्रचार ॥  
 'दण्ड लक्षण' माना मान । मरवा, मोटा भाति बखान ॥  
 मर बदलना भी अवश्य । मोद 'अनिय' मरण' लक्ष्य ॥  
 मर पुनः हि 'भेद' बखान । वादक पुनः 'कावच' मान ॥  
 'दा आदिक' 'बुद्धि' बहताए । पदों के दूकड़े 'पद' बहाए ॥  
 म-बोए 'बुद्धि' विचार । 'प्रवर' मेव प्रत्यभि निवार ॥  
 'अनिय' 'अनु-अदन' बहताए । मो दूरके पद भेद बहाए ॥  
 मरार हो 'मर' बहताए । 'साध' के दो भेद बहाए ॥  
 म भी मर हीन में होय । पुन भाति गो माना दोय ॥  
 वे प्रकाशति 'मान' होय । मीनव चंद्र प्रकाश 'उद्योग' ॥२४॥

दण्ड के भेद :—

म :—अनन्यः स्वस्वार्थ ॥२४॥

गो :— पुनः के दो भेद बहताए ।

'परमाणु', 'स्वार्थ' बहताए ॥

अनु अविभागी एक प्रदेस ।

एकाधिक 'स्वार्थ' विशेष ॥२५॥

२२२वें सूत्र की व्याख्या —

पञ्चो वर्णिता गुण विनयात् । मय, वर्ण, रस एक प्रकार ॥  
 क्षीय-गुण में एक यत्नान् । मित्रात् ऋतु में भी द्रव्य जान ॥  
 दो वर्ण अणु प्रत्येक । मयिर्वाद् रस-रूप अनेक ॥२२॥  
 वर्णों की उत्पत्ति कैसे होती है —

मूल — भेद मयानेन उत्पद्यते ॥२३॥

भाषा :— स्वरूपों का कारण मान ।

‘भेद’ और ‘संघात’ यत्नान् ॥२३॥

२२३वें सूत्र की व्याख्या —

स्वयं दृष्टना भेदं यत्नान् । मय अणु मयान् क्ताए ॥  
 मय अणु का जितने होय । स्वयं प्रदेसी उतने मय ॥२३॥  
 अणु बनने का कारण —

मूल — भेदादणु ॥२४॥

भाषा :— अणु बनने में कारण मान ।

स्वरूपों का भेद यत्नान् ॥२४॥

स्वयं का कारण भेद मयान् क्ताए क्ताः —

मूल :— भेद मयानाम्या चाशुभः ॥२५॥

भाषा :— कारण भेद संघात यत्नान् ।

आंखों से स्वरूप दिखाए ॥२५॥

द्रव्य तथा सत् का लक्षण .—

मूल :— सद् द्रव्यलक्षणम् ॥२६॥

उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्तं सत् ॥२७॥

भाषा :— द्रव्यहि लक्षणं सुन चित लाए ।

सत् है जो सो द्रव्य कहाए ॥२६॥

सत् कहिए ‘उत्पाद’ हि युक्त ।

हो ‘व्यय’ और ‘ध्रौव्य’ संयुक्त ॥२७॥

३०वें मूल की व्याख्या :—

नव पर्याय नाम 'उत्पाद' । ता का शय 'व्यय' बिना विवाद ॥  
 निज स्वभाव नहि छोड़े सोय । पर्यायें नितनी भी होय ॥  
 वस्तु 'घोष्य' गुण सो ही मान । त्रय गुण सो सब द्रव्यहि जान ॥  
 जैसे घट मिट्टी पर्याय । टूटे मिट्टी नहि बिनगाय ॥  
 एक साथ ही तानो धर्म । द्रव्यों में परिवर्तन मर्म ॥  
 गत का नहि श्रवण बिनाग । असत न उत्रे साग प्रयास ॥  
 निज स्वभाव नहि छोड़े सोय । जड़ चेतन मुा कबहुँ न होय ॥३०॥  
 नित्य का स्वरूप :—

मूल :—तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥३१॥

भाषा :— वस्तु स्वभावा कहा 'तद्भाव' ।

कुछ अधिनश्चर 'नित्य' यथाय ॥

तासों पुनि द्रव्यन पहिचान ।

नित्य-अनित्य दोऊ हैं जान् ॥३१॥

३१वें मूल की व्याख्या :—

घट फटा-पर्याय अनित्य । मिट्टी दोष अपेक्षा नित्य ॥  
 नित्य-अपेक्षा है सामान्य । पर पर्याय अनित्य बचान ॥  
 एक व्यक्ति सम्बन्ध अनेक । भिन्न अपेक्षा ही प्रत्येक ॥३१॥  
 वस्तु के मुख्य और गौण धर्म :—

मूल :—अपित्तानपित्तसिद्धेः ॥३२॥

भाषा :— मुख्य धर्म को 'अपित्त' कहा ।

गौण हि धर्म 'अनपित्त' रहा ॥

दोनों से मिल कर हो सिद्ध ।

वस्तु कई गुण युक्त प्रसिद्ध ॥३२॥



मूल :- बन्धनविहीन तारिणामिहो ॥३७॥

भाषा :- अधिष्ठान गुणों से जो हो मुक्त ।

तो कर से निज में संयुक्त ॥३७॥

३७वें मूल की व्याख्या :-

पूर्व अथावा तत्र कर मान । यद्य अथवा तीव्री जान ॥

ता से रहे न विविक्त भेद । उद्यो पट धागे वषाम मचेद ॥

तो गुण से दृग्मा अधिष्ठान । कम मुक्त थाता जगत् स्थितान ॥

नाहि अथवा तीव्री सोप । ता से बहु स्वयं य होय ॥३७॥

द्रव्य का अन्य प्रकार से मक्षण :-

मूल :- गुणार्थादिव न द्रव्यम् ॥३८॥

भाषा :- जा में होवे गुण पर्याय ।

यस्तु 'द्रव्य' सो हो कहलाय ॥३८॥

३८वें मूल की व्याख्या :-

पाहे जिह्वा ही पर्याय । द्रव्य माय सो गुण कहलाय ॥

रूप आदि पृथक्त्व के जान । ओर जीव का गुण है जान ॥

गुण प्रवृत्ति वास्तु ब्रह्माण । द्रव्य उन्माद कही पर्याय ॥

द्रव्य तथा गुण अद पर्याय । प्रदे न, सो 'गुण' द्रव्य कहाय ॥

गुण सादृश्य 'अन्यर्था' यथा । 'अतिरेकी' पर्याय कहाय ॥३८॥

बान द्रव्य का वचन :-

मूल :- बानवत् ॥३९॥

भाषा :- बान द्रव्य है रूप विहीन ।

अतस्त्वात्, निष्क्रिय, गतिहीन ॥३९॥

गंध रसादिह से है हीन । बान अमृतिह रूप विहीन ॥

दर्शन जान रहित है सोय । ता तें बान अचेतन होय ॥

सोतासाग अनंत प्रदेश । हर घर है बाबाणू एह ॥  
 रत्न राशि सम गी बाबाणू । रहें सिंग ताते गति काय ॥  
 भाग-अलग सिंग, गति एक । काग द्रव्य कहलाएँ अनेक ॥  
 जिनने सोतासाग प्रदेश । उनने काय न मराय रोश ॥  
 एह प्रदेश न दूजे जाएँ । सम सिंगी, निधिय कहलाएँ ॥३९॥  
 व्यवहार काल का प्रमाण :-

मूल :- सोमान्तगमय ॥४०॥

भाषा :- सो अनन्त समयों से युक्त ।  
 भूत भविष्यत नाम प्रयुक्त ॥  
 यत्तमान है 'समय' प्रमान ।  
 भूत भविष्य अनंतहि जान ॥४०॥

काल अश मुनिए चित्नाय । सधने छोटा 'समय' कहाय ॥  
 समय-समूह काल-व्यवहार । घटा, मिनट आदि चित्तारा ॥४०॥  
 गुण का लक्षण :-

मूल :- द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणा. ॥४१॥

भाषा :- द्रव्याश्रय से ही जो रहें ।  
 यों निर्गुण, तिनको गुण कहें ॥४१॥

परिणाम का लक्षण :-

मूल :- तद्भावः परिणामः ॥४२॥

भाषा :- निज स्वभाव तद्भाव बताए ।  
 सो ही पुनि परिणाम कहाए ॥४२॥  
 धर्म द्रव्य गति होय सहाय । तद्भावहि परिणाम कहाय ॥४२॥  
 (पाँचवीं अध्याय समाप्त)

## द्विठा अध्याय

इस अध्याय में आत्मर तत्त्व का बयान है ।

मूल :—वाय-वाहू मनः कर्मयोगः ॥१॥

भाषा :— वाय, वचन अरु मन की प्रिया ।

‘योग’ नाम ता हो को प्रिया ॥१॥

इस मूल की व्याख्या :—

आत्म प्रवेशहि हृत्त-चय होय । आत्म ‘योग’ कहावे सोय ॥

भेद निमित्तहि नय विचार । वाय, वचन, मन योग विचार ॥

दो वाक्य प्रत्येक यथात् । ‘व्याख्यान’ अरु व्याख्या कह्यात् ॥

प्रथम-कर्म-क्षय-उदयम भाग । वाक्य वाह्य कर्म-नो जान ॥

गुणध्यान तेरह तब सोय । योगाभाय जोरहवे होय ॥१॥

यह योग ही आत्मर है :-

मूल :-स आत्मरः ॥२॥

भाषा :— आत्म प्रवेशहि हृत्तचय योग ।

आत्मर हेतु कहें सब योग ॥२॥

इस मूल की व्याख्या :-

पुण्य पाप दो कर्म प्रचार । आत्मर हेतु योग है द्वार ॥

मम पद धूमि आदि ज्यों गहे । कर्म-योग-रत्न र्यों महे ॥

आत्म बचावहि नम जय होय । योग कहावे आत्मर गोय ॥

तत्त्व तोह ज्यों जल शीमाय । अगुदात्म र्यों कर्म बँधाय ॥२॥



अधिकरण ने भेद —

मूल — अधिकरण जीवाजीवा ॥७॥

भाषा:— अधिकरण हि आश्रय आधार ।

जीव-अजीवहि विविध प्रकार ॥७॥

जीवाधिकरण के भेद—

मूल:—आद्य गरम्भ-समारम्भारम्भ-योग-कृत-कारितानुमत  
कपाय-विशेषैस्त्रिभिस्त्रिरवतुशैरुग ॥८॥

भाषा:— यश प्रमाद 'सम्भ्रम्भ' नयोन ।

'समारम्भ', 'आरम्भ' सु तीन ॥

तीन भेद पुनि मन-वच-काय ।

कृत-कारित-अनुमोदन भाष्य ॥

क्रोध-मान-माया अह लोभ ।

इन सबसे उपजे विक्षोभ ॥

सो जीवाधिकरण के भेद ।

गुणन किए शत-आठ प्रभेद ॥८॥

८ वें सूत्र की व्याख्या:—

कर्माश्रय शत-आठ प्रकार । कारण हेतु माला विधार ॥

निश्चय ही 'सम्भ्रम्भ' कहाय । 'समारम्भ' साधन हि जुटाय ॥

कार्यारम्भ 'आरम्भ' हि मान । भावहि साधन तीनों जान ॥

स्वयं करे सो 'कृत' कहलाए । 'कारित' दूजे से करवाए ॥

कार्य सराहे अन्यहि जोय । 'अनुमोदना' कहावे सोय ॥

हर कपाय के चार प्रकार । गुणन किए सोलह विस्तार ॥

तीन भेद हर एक बतलाय । भेदइतालिस मन-वच-काय ॥

सो जीवाधिकरण कुन भेद । चारशतक बत्तीस प्रभेद ॥८॥

अजीवाधिकरण के भेदः—

मूल :—निर्वर्तना-निक्षेप-संयोग-निसर्ग द्वि-चतुर्द्वि-त्रि-  
भेदा परम् ॥९॥

भाषा:— अथ अजीव अधिकरण घटाए ।  
रचन। 'निर्वर्तना' कहाए ॥  
रख-रखाय 'निक्षेप' बखान ।  
मेल वस्तु 'संयोग' हि जान ॥  
भेद होहि क्रमशः दो चार ।  
संयोग हि पुनि दोय प्रकार ॥  
नाम 'निसर्ग' प्रवृत्तिहि लहे ।  
मन-वच-काय भेद त्रय कहे ॥९॥

९वें सूत्र की व्याख्या:—

निर्वर्तन दो भेद बखान । मूल और उत्तर गुण जान ॥  
मूल-क्षरीर, वचन, मन जान । श्वातोच्छ्वासहि सहित बखान ॥  
द्रुजा उत्तर गुण कहलाय । काष्ठ आदि पर चित्र बनाए ॥  
वस्तु धरे बिन देखे जोय । 'अप्रत्यक्षित' कहिए सोय ॥  
दुष्ट मनस्थिति रचे-रखाए । 'दुष्प्रमृष्ट' निक्षेप कहाए ॥  
पटके जरदी-पस्दी जान । सो 'सहसा निक्षेप' बखान ॥  
साफ किए बिन सेटे जोय । 'अनामोग निक्षेप' हि सोय ॥  
खान-पान में मेल मिलाय । 'भुक्तपान संयोग' कहाय ॥  
अन्यहि वस्तु मिलावे जान । 'उपकरणहि संयोग' बखान ॥  
त्रय 'निसर्ग' के भेद बताय । दुष्ट प्रवृत्तिहि मन, वच, काय ॥  
आत्म व ग्यारह भेद बताय । सो अजीव अधिकरण कहाय ॥  
कर्मान्नव सामान्य प्रकार । आगम में जानहु विस्तार ॥९॥

ज्ञानावरण तथा दर्शनावरण कर्मों के आस्रव के कारण.—

मूलः—तत्प्रदोष-निन्हव-मात्मयन्तिरायासादनोपधाता ज्ञानदर्श-  
नावरणयोः ॥१०॥

भाषाः— ईर्ष्या आदि 'प्रदोष' कहाय । —

'निन्हव' निज अज्ञान बताय ॥

'मात्सर्य' निज ज्ञान छिपाए ।

विघ्नहि 'अन्तराय' कहलाए ॥

'आसादना' और 'उपधात' ।

ज्ञान-दर्शनावरण बंधात ॥१०॥

१०वें सूत्र की व्याख्या —

ज्ञान अरु दर्शन के आवरण । कर्म कहे आस्रव पट वरण ॥  
पर सभाषण बाधा ताय । कर प्रयोग निज बल बंध, काप ॥  
मान करे नहि सम्यक ज्ञान । 'आसादना' कही सो जान ॥  
ता ही को यदि झूठा कहे । सो उपधात' हेतु को सहे ॥  
प्रदोषादि दो भेद बखान । जिन वश रहता दर्शन, ज्ञान ॥१०॥

असाता वेदनीय कर्म आस्रव के कारण.—

मूलः—दुःख-शोक-तापत्रन्दन-यध-परिदेवनान्यात्म-परोभयसंघा-  
नान्य-सङ्केतस्य ॥११॥

भाषाः— 'दुख', 'शोक' अरु 'ताप' कहाए ।

'आश्रन्दन' पुनि 'यध' यतलाए ॥

'परिदेवन' यह श्रन्दन मान ।

स्य-पर दुखो हो जा सों जान ॥

कर्म असाता आश्रय काज ।

सभी शत्रुवत रहे गिराज ॥११॥

११वें सूत्र की व्याख्या—

दुस्र मोक्ष कर सुख दुस्र पाय । अथवा पर को हो दुगदाय ॥  
 या दोनों को ही हो बनेन । कर्मक्षय, गहि संशय मेन ॥  
 अथ समूह द्विज, साहस्यार । ग्यामानय का करे बिचार ॥  
 दीङ्-पुन दुस्र पावे जान । कर्त्रसार भी दुस्रो महान ॥  
 निरूपर दोनों को दुगदाय । सो उभयस्थ बनेन बह्मदाय ॥११॥

सातावेदनीय कर्म के धाम्नु के कारणः—

मूनः—भूत-वस्तु-रक्षा-दान-गरागर्भवमादिभिरा शांति शीघ्र-  
 मिति शब्देभ्यः ॥१२॥

भाषाः— प्राणी और सत्तो पर क्या ।  
 नाम मोक्ष 'भनुकम्पा' नया ॥  
 'दान' और 'संयम-सहस्यार' ।  
 आत्मज्ञान भिन भी हो रयाग ॥  
 मन एकाग्र करे घर ध्यान ।  
 'योग' कहाये सो ही जान ॥  
 क्षमा भाव सो 'क्षान्ति' कहाए ।  
 सोन छोड़ना 'शीघ्र' कहाए ॥  
 कर्मक्षय हो उबत प्रकार ।  
 सातावेदनीय चित्तधार ॥१२॥

१२वें सूत्र की व्याख्याः—

गुहाभास में कारण जान । सातावेदनीय गो मान ॥  
 शीघ्र, शास्त्र, अमर अहार । दान यत्निय चार प्रकार ॥१३॥

२३वें सूत्र की व्याख्या :—

सब पुरुषों को जो आदरे । मन संसार भीड़ता घरे ॥  
अप्रमाद, निश्छिन्न चारित्र । नाम कर्म शुभ कारण मीत ॥  
तासो वदन मिले मनुहार । सुन्दर, बलपुन विविध प्रकार ॥२३॥

तीर्थंकर नाम कर्म के आश्रय के कारण:—

मूल—दर्शनविशुद्धिविनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतिचारोऽ  
भोक्षणज्ञानोपयोग-संवेगो शक्तितस्त्यागतपत्नी साधु-  
समाधि-वैद्यावृत्त्यकरण-महंदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचन भक्ति-  
रावश्यकपरिहाणिमार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति  
तीर्थंकरत्वस्य ॥२४॥

भाषा:— नाम कर्म तीर्थंकर शेष ।

शीलव्रत कारण कहे विशेष ॥

‘दर्शन-विशुद्धि’ प्रथम बतलाए ।

‘विनय-मानता’ पुनि कहलाए ॥

दोष रहित व्रत शील विचार ।

‘शीलव्रतेषु बिना अतिचार ॥

‘पाठन-पठन सु सम्यग्ज्ञान’ ।

अगोद्विग्न ‘संवेग’ बलान ॥

शक्तिनुसार करे जो ‘त्याग’ ।

शक्ति प्रमानहि ‘तप’ वैराग ॥

विघ्न तपस्वी, मुनि करि दूर ।  
 'साधु-समाधि' सहे भरपूर ॥  
 पुनः साधु की विपदा हरे ।  
 'वैद्यावृत्यकरण' सो करे ॥  
 'श्री अर्हंत देव', 'आचार्य' ।  
 उपाध्याय, आगम सिरधार्य ॥  
 भक्ति माय इन सब में होय ।  
 'बहुधुत', 'प्रवचनभक्ति' हि सोय ॥  
 नियत समय, प्रतिदिन, चितलाय ।  
 घट 'आवश्यक कर्म' बताय ॥  
 जिनमत 'मार्ग प्रभावन' करे ।  
 'प्रवचन वत्सलस्य' मन धरे ॥२४॥

२४वें सूत्र की व्याख्या:—

दर्शन विगुह्य हि अग बताए । आठ प्रकार बहे समझाए ॥  
 शंका हीन निश्चित होय । 'निष्काशित' इच्छा बिन जोय ॥  
 मर्मक दर्शन-ज्ञान-चरित्र । भरे हुए भंडार पवित्र ॥  
 ऊपर दिसाहि अमुन्दर जान । तो भी धिरति न मुनि प्रतिमान ॥  
 खेद न तनिक हृदय मे आय । 'निर्विचिकित्सा' अग बहाय ॥  
 किंचित नहि मिथ्या श्रद्धान । सो 'अमूढदृष्टिता' जान ॥  
 अन्ध दोष नहि सर्वाहि बताय । सो ही 'उपगूहन' कहलाय ॥

अन्तराय कर्म के आश्रय के कारण:—

मूल:—विघ्नकरणमन्तगयस्य ॥२७॥

भाषा:— दानहि, लाम, भोग, उपभोग ।

पंचम धीर्य कहें सब लोग ॥

इनमें विघ्न करे जो कोय ।

अन्तराय कर्मसिख होय ॥२७॥

२७वें सूत्र की व्याख्या:—

पाँचों में से ,रोके जोय । सोइ नाम कर्मसिख होय

दान समय यदि विघ्न लगाय । कर्मसिख 'दानान्तराय'

ता का हो अनुभाग विशेष । भाग सप्त कर्मों में शेष

इसी भाँति सब ही में जान । कर्मसिख हों निश्चय मान ॥२७॥

( छठा अध्याय समाप्त )

---

## सातवाँ अध्याय

इस अध्याय में व्रतादि का स्वरूप बतलाया गया है ।

व्रतो का स्वरूपः—

मूलः—हिंसाऽनृत-स्तेयाग्रह-परिग्रहेभ्यो विरतिर्ब्रतम् ॥१॥

भाषाः— 'हिंसा', 'अनृत' और 'स्तेय' ।

'अग्रह', 'परिग्रह' को तज देय ॥

त्याग नियम ले निश्चय ठान ।

व्रत सो मन-संकल्प बखान ॥१॥

१ने सूत्र की व्याख्याः—

पर दुख देना 'हिंसा' होय । 'अनृत' झूठ बहे सब कोय ॥

चोरी ही 'स्तेय' कहाय । और कुशील 'अग्रह' बताय ॥

घन-दौलत-भोगहि अति प्रीत । सोइ 'परिग्रह' कहिए भीत ॥

पाप-विरक्ति विरति कहलाय । आगम में सो व्रत बतलाय ॥

धर्म अहिंसा सर्व प्रधान । ता ते कथन प्रथम ही जान ॥

अन्य धर्म सब बाढ़ समान । रक्षा करने धर्म महान ॥१॥

व्रतों के भेदः—

मूलः—देश-सर्वतोऽणु-महतो ॥२॥

भाषाः— एक देश 'अणुव्रत' है मान ।

पूरा त्याग 'महाव्रत' जान ॥२॥

२सरे सूत्र की व्याख्याः—

कुछ वस्तु, कुछ काल प्रमान । त्याग सोइ 'एक देश' बखान ॥

अथवा 'अणुव्रत' कहिए सीय । आजीवनहि 'महाव्रत' होय ॥२॥



अनृत (असत्य) का लक्षण:—

मूल—असदभिधानमनृतम् ॥१४॥

भाषा:— बात कष्टप्रद पर को होय ।

है असत्य या 'अनृत' सोय ॥१४॥

१४वें सूत्र की व्याख्या:—

मिथ्या झूठ कहें सब कोय । कटुक सत्य भी मिथ्या होय ॥

काने को यदि काना कहे । व्यग्न-वाण सम ताको सहे ॥

हिंस वचन है असन समान । स्व-पर दुखी हों जातों जान ॥

धर्म अहिंसा सर्व प्रधान । अन्य चार रक्षार्थ ब्रह्मान ॥१४॥

चोरी का लक्षण:—

मूल:—अदत्तादान स्तेयम् ॥१५॥

भाषा:— बिना दिए पर वस्तु उठाए ।

चोरी या स्तेय कहाए ॥१५॥

१५वें सूत्र की व्याख्या —

पर वस्तु, बिन अनुमति मान । बुरे भाव गह लेवे जान ॥

रहे अप्राप्य, प्राप्त या होय । चौर्य वृत्ति ही जानो सोय ॥१५॥

अग्रह का लक्षण:—

मूल:—मैथुनमग्रह ॥१६॥

भाषा:— रति-मुख-हेतु क्रिया ही मान ।

है अग्रह या मैथुन जान ॥१६॥

१६वें सूत्र की व्याख्या:—

अहिंसादि पावन हित काम । सो ही कहिए ब्रह्म सत्ताम ॥

मैयुनादि बग बाधा होय । कार्य अद्वय कहावे मोय ॥  
 चारित मोह उदयवग जोय । स्त्री पुदय समागम होय ॥  
 ज्ञा में रति-गुण हेतु प्रयाग । मैयुन मोद कहावे जान ॥  
 कभी-कभी शं पुन्य विचार । अथवा हो स्त्री नितपार ॥  
 या कुवेष्टा स्वपुष्टि मान । सब अन्तर्गत मैयुन जान ॥१६॥

परिग्रह का लक्षणः—

मूत्रः—मूर्च्छा परिग्रहः ॥१७॥

भाषाः— भाष ममर्थाहि मूर्च्छा कहा ।

नाम परिग्रह दूजा सहा ॥१७॥

१७वें मूत्र की व्याख्याः—

मूर्च्छा अर्थ यही धीमान । अनेकतर नही है जान ॥  
 बाह्य वस्तु में ही अति जाव । मूर्च्छा मोद परिग्रह भाव ॥  
 ममता दर्शन-ज्ञान-चरित्र । नहीं परिग्रह मूर्च्छा मित्र ॥  
 तुष्टा बटन गाँठ नहि दाम । अन्त भाष परिग्रह नाम ॥  
 योग प्रमत्ताहि मन-वच-नाय । सर्व पाप कारण बतलाय ॥१७॥

व्रती का स्वरूपः—

मूत्रः—निः शल्यो व्रती ॥१८॥

भाषाः— भाषा मिथ्या और निदान ।

शल्य रहित त्रय, व्रती महान ॥१८॥

१८वें मूत्र की व्याख्याः—

शल्य कहीं तीनों दुःखदाय । शल्य रहित सो व्रती कहाय ॥  
 शरीर शरीर शरीर शरीर । शरीर शरीर शरीर शरीर ॥

मन, वच और काय कुष्ठ और । 'माया' शब्दों में सिरमौर ॥  
 नाहि होय तत्त्वहि श्रद्धान । 'मिथ्यादर्शन शब्द' बगान ॥  
 विषयासक्ति 'निदान' कहाय । शून्य समान सभी दुष्टदाय ॥  
 तीनों शब्द हृदय नहि जोय । सम्यक् व्रती कहाये सोय ॥  
 जग-ध्वन-हित व्रत धारण करे । भोग चाहू या मन में धरे ॥  
 भेष भती हो साधु समान । व्रती कदापि न ताको जान ॥१८॥

व्रती के भेदः—

मूलः—अगार्यनगारयव ॥१९॥

भाषाः— व्रत पालक दो भेद बखान ।  
 गृह में घास 'अगारी' जान ॥  
 गृह त्यागी 'अनगारी' कहा ।  
 मुख्य विभेद प्रवृत्तिहि रहा ॥१९॥

अगारी व्रती का स्वरूपः—

मूलः—अणुव्रतोऽगारी ॥२०॥

भाषाः— एक देश अणुव्रत ले पाँच ।  
 ता ही नाम 'अगारी' साँच ॥२०॥

२०वें सूत्र की व्याख्याः—

व्रत जीवों की 'हिंसा' त्याग । त्याग 'असत' वश ईर्ष्या राग ॥  
 ले व्रत नहि पर वस्तु चुराए । 'अधोर्वाणुव्रती' कहलाए ॥  
 तजे भोग पर-स्त्री जोय । 'ब्रह्मचर्याणुव्रती' सो होय ॥  
 सीमा धन, भोगादिक जान । अणु व्रत सो 'परिग्रह परिमान' ॥  
 पाँचों अणु व्रत पाले जोय । नाम 'अगारी' सार्थक सोय ॥२०॥

॥ श्री गुरुभ्यो नमः ॥

နိမိတ်တို့ကို ခုတ်ဖျက်ခြင်းဖြင့် အကျိုးရှိစေရန် အစီအစဉ်များကို  
ပြုလုပ်ဆောင်ရွက်နေကြောင်း အကြောင်းအရာများကို အောက်ပါအတိုင်း ဖော်ပြပါမည်။

२:— गन्ध उपादि 'अगाधो' ओर ।  
 बहिष् सद्यः धान्य निरमो ॥  
 'दिग्' अह 'देव-निरति' हो जाय ।  
 गमनादिह् वा बरे प्रमाण ॥  
 बहो 'अनर्प-रश्मि' प्रय गोच ॥  
 विद्या व्याप्त अथ संयत् फल ॥  
 'गामादिह', 'ओदधोयवाम' ।  
 बरे अगाधो धर विश्वास ॥  
 'परिमोयोयमोत - परिमत्त' ।  
 'अनिधि गविनाय' हि पुनि जान ॥२१॥

१५ सुख श्री कल्याण -

॥ ये लोका दिवा प्रमान ॥ कोट मरी, निमि आदि बमान ॥  
 ॥ ये वन हो मोहन वरीय ॥ ला की 'मोहन' माते गुण ॥  
 ॥ व, मरु, दलदि बमान ॥ मयनादि का को, प्रमान ॥  
 ॥ ये मयन हेतु हो चान ॥ 'मय' दिशि वन कहिण मोर ॥  
 ॥ मय वनवृत्ति नीव विनय ॥ 'मय' वान' मय, 'मय-उपम' ॥  
 ॥ 'मय' वानवृत्ति, 'मय' वान' ॥ 'मय' वान' मय, 'मय-उपम' ॥  
 ॥ ये विधाने मयवृत्ति मोर ॥ 'मय' वान' हा कहिण मोर ॥  
 ॥ ये वान की देवे मय ॥ 'मय' वान' देवे' कहान ॥  
 ॥ ये वान वान वान कहान ॥ 'मय' वान' मय, 'मय-उपम' ॥

मो सब कर्म 'प्रमाद चरित्र' । दण्ड-अनर्थहि तीजा मित्र ॥  
 विष, शस्त्रादि हिंस सामान । दिए कहावे 'हिमादान' ॥  
 पाप वृत्ति हो मुने, मुताए । कथा 'अनुभ श्रुति' सोइ कहाए ॥  
 इनका त्याग करे जो कोय । 'विरति-अनर्थ-दण्ड व्रत' सोय ॥  
 समय नाम आत्म का जान । आत्म ध्यान 'सामायिक' मान ॥  
 करे सामायिक सन्ध्या तीन । थावक सो व्रत मे पन्धीन ॥  
 अशन, भक्ष्य, लेह्य अह पान । त्याग करे उपवासहि जान ॥  
 पचेन्द्रिय निज तजहि विलास । रहे उासी, सो उपवास ॥  
 अष्टम अह चौदस तिथि चार । प्रतिमासहि उपवास विचार ॥  
 पर्व दिवस ही प्रोवध होय । वृत्त प्रोउगोउवासहि सोय ॥  
 इत्यादिक अह भोजन पान । एक बार ही 'भोग' वसान ।  
 भोगी जावे बारबार । वस्त्रादिक 'परिभोग' विचार ।  
 वृत्त इनका मन सीमा ठान । 'परिभोगोपभोग परिमान' ।  
 तिथि निश्चित नहि जाकी जान । वृत्ती अतिथि को देवे दान ।  
 'अतिथि-संविभागहि-वृत्त' सोय । पाले वृत्ती अगारी होय ।  
 औषध, शास्त्र, अभय, आहार । 'अतिथि रुविभागहि वृत्त' चार ।  
 पच वृत्ती मे दृढता लाए । विरति तीन 'गुणवृत्त' कहलाए ॥  
 आत्म सयमन हेतु विचार । अतिम हैं 'शिक्षावृत्त' चार ॥२१॥  
 सल्लेखना का वर्णन:-

भूल:-मारणान्ति की सल्लेखना जोपिता ॥२२॥

भाषा:- मरण काल को निश्चित जान ।

सल्लेखना मनहि ले ठान ॥

खान-पान, मोहादिक तजे ।

काय, कषाय कृशे, प्रभु मजे ॥२२॥

२०७ वे सूत्र की व्याख्या.—

आयुष्यं यत्र परिणामं गच्छति । गो दास्य मृत्युं कदाचि मीन ॥  
निहतं मृत्युं का कर अनुमान । रजोगतं कर दे भोजनं पान ॥  
राग-द्वेष, जल-मोक्ष भुवात् । मृदते ममता भाव हटात् ॥  
अतन विवहरे में विव घरे । निहरे मृत्युं वा स्वागत करे ॥  
मृत्युं जहाँ पर निश्चित होय । आत्मघात नहिं कहिए सोय ॥  
राग, द्वेष वग मृत्युं बुवात् । दूरा मरे, विव आदिह नात् ॥  
आत्मघात गो ही की जान । अन्तर है भू-गगन गमान ॥  
आग मगी यदि घर में होय । वस्तु अनुस्य कबावें सोय ॥  
मरण बान में मोद समान । धर्म असूत्य गहे, तत्र प्रान ॥  
बेदन-मृत्यु घटे विवहार । शुभ-गति हो परलोक मँसार ॥२३॥

अब धर्तों के दोषों:— (अतिचारों) का विवेचन करने हैं ।

सम्प्रादर्शन के अतिचार:—

सूत्र.—गता-काता विविचिताऽदृष्टिप्रज्ञता सम्प्रा  
सम्प्रादृष्टेरतिचाराः ॥२३॥

भाषा:— सम्प्राक दर्शन के अतिचार ।

अथवा दोष सुनहु चित्तधार ॥

आगम द्विविधा 'शंका' मान ।

भोग चाहना 'कांक्षा' जान ॥

घृणा दुखी, रोगी से होय ।

अथ 'विचिकित्सा' कहिए सोय ॥

मन विध्वस्त करे सम्मान ।

(अथ विविध 'मोक्ष' मार्ग ॥

ताहि वचन मे भी आररे ।

‘अन्य दृष्टि का मंस्तव’ करे ॥२३॥

मो पन दीग अनिह नाहि गोप । मस्तव’ मे वलिग मोप ॥२३॥

दूध और शीशो के अतिचार —

मूल — पृत-शीशेषु पध पन पयानमम ॥२४॥

भाषा:— यत् अरु शील कहै अतिचार ।

पाँच पाँच क्रमशः चितधार ॥२४॥

मस्त शील, वृत्त पन विचार । पाँच पाँच मस्तके अतिचार ॥

अहिमादि वृत्त पन महान । मस्त शील रक्षक मम जान ॥२४॥

अहिमाणु वृत्त के अतिचार —

मूल — बन्ध-वध-च्छेदानिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥२५॥

भाषा:— जीव ‘बन्ध’, ‘वध’ अथवा ‘छेद’ ।

यत् अतिचार अहिमा भेद ॥

चव ‘अतिमारारोपण’ जान ।

पँच निरोध ही भोजन-पान ॥२५॥

२५वें मूल की व्याख्या —

विजरा या मूँटादि बंधाए । पशु-पक्षिन की, ‘बन्ध’ कहाए ॥

कोटे, बेतादिक की मार । कहलावे सो ‘वध’ चितधार ॥

वध के अर्थ न हत्या याँ । हत्या विरति हुई, वृत्त जहाँ ॥

कान, नाक, पूँछादि कटाए । अतिचार हि मो ‘छेद’ कहाए ॥

बहुत अधिक लादे सामान । सो ‘अतिमारारोपण’ जान ॥

चारा ठीक समय न खिलाए । ‘अन्नहि पान निरोध’ कहाए ॥

सो पाँचो ही हैं चितधार । अहिमाणु वृत्त के अतिचार ॥२५॥

। णु व्रत के अतिचारः—

—मिथ्योपदेश-रहोम्याख्यान-कूटलेखनक्रिया-  
न्यासापहार-साकारमत्रभेदा. ॥२६॥

।— 'मिथ्योपदेश', 'रहोम्याख्यान' ।  
'लेखन-कूट-क्रिया' त्रय जान ॥  
चव 'न्यासापहार' चितधार ।  
पंचम 'मत्रभेद-साकार' ॥  
सो भविजन मन लीजे धार ।  
हैं सत्याणु सतहि अति चार ॥२६॥

अहित उद्देश प्रदान । सो 'मिथ्योपदेश' है जान ॥  
पुनः इति कहि रहस्य । आश्रय सोइ 'रहोम्याख्यान' ॥  
वात पर देय कहाए । 'लेखन-कूट-क्रिया' कहाए ॥  
क धरोहर देवे कम । सो 'न्यासापहार' विभ्रम ॥  
वश पर वात बताय । 'मत्र भेद साकार' कहाए ॥२६॥

स्याणुव्रत के अतिचार —

—स्तेनप्रयोग-तदाहुतादान-विरुद्धराज्यातिक्रम-

हीनाधिकमानोन्मान-प्रतिरूपरुव्यवहारा ॥२७॥

।— 'स्तेन-प्रयोग' प्रथम है जान ।  
दूजा 'सो' 'तदाहुतादान' ॥  
त्रय 'विरुद्ध-राज्यातिक्रम' ।  
चोर-दजारी आदिक भ्रम ॥  
चव 'हीनाधिक मानोन्मान' ।

(निम्नलिखित सूचक) कि ॥२७॥





सामायिक के अतिचारः—

मूलः—योगदुष्प्रणिधानानादर-स्मृत्यनुपस्थानानि ॥३३॥

भाषाः— सामायिक अतिचार बखान ।

काय, वचन, मन 'दुष्प्रणिधान' ॥

चय अतिचार 'अनादर' सोय ।

'स्मृत्यनुपस्थापन' पंच होय ॥३३॥

३३वें सूत्र की व्याख्या —

यदि शरीर निश्चल ना होय । बोले मन अशुद्ध हि होय ॥

सामायिक में चित्त न रमाय । हो कषाय वश इन-उत जाय ॥

वय रोगो का दुष्प्रणिधान । शिथिल अशुद्धहि, चबल मान ॥

क्रिया सामायिक, थड़ा नाय । सोइ 'अनादर' है कहलाय ॥

नित्य-क्रियादिक, पाठ भुलाए । 'स्मृत्यनुपस्थापन' कहलाय ।

पाँच दोष सो ही वितपार । सामायिक के हैं अतिचार ॥३३॥

प्रोषधोपवास व्रत के अतिचारः—

मूलः—अप्रत्यवेक्षिताप्रमाजितोत्सर्गादान-संस्तरौपक्रमणानादर

स्मृत्यनुपस्थानानि ॥३४॥

भाषाः— बिन देखे, बिन शोधन मान ।

मल-मूत्रादि विसर्जन जान ॥

सामग्री, वस्त्रादि उठाय ।

आसनादि या देय बिछाय ॥

करे अनादर, क्रिया भुलाए ।

उपवासहि अतिचार बलाए ॥३४॥

भूख, प्यास वश आदर नाय । व्रत आवश्यक क्रिया भुलाए ॥

बन्तु न लख सब क्रिया विचार । प्रोषध उपवासहि अतिचार ॥३४॥

2 1 1 1

• • • • •

1. 2. 3. 4. 5. 6. 7. 8. 9. 10. 11. 12. 13. 14. 15. 16. 17. 18. 19. 20. 21. 22. 23. 24. 25. 26. 27. 28. 29. 30. 31. 32. 33. 34. 35. 36. 37. 38. 39. 40. 41. 42. 43. 44. 45. 46. 47. 48. 49. 50. 51. 52. 53. 54. 55. 56. 57. 58. 59. 60. 61. 62. 63. 64. 65. 66. 67. 68. 69. 70. 71. 72. 73. 74. 75. 76. 77. 78. 79. 80. 81. 82. 83. 84. 85. 86. 87. 88. 89. 90. 91. 92. 93. 94. 95. 96. 97. 98. 99. 100. 101. 102. 103. 104. 105. 106. 107. 108. 109. 110. 111. 112. 113. 114. 115. 116. 117. 118. 119. 120. 121. 122. 123. 124. 125. 126. 127. 128. 129. 130. 131. 132. 133. 134. 135. 136. 137. 138. 139. 140. 141. 142. 143. 144. 145. 146. 147. 148. 149. 150. 151. 152. 153. 154. 155. 156. 157. 158. 159. 160. 161. 162. 163. 164. 165. 166. 167. 168. 169. 170. 171. 172. 173. 174. 175. 176. 177. 178. 179. 180. 181. 182. 183. 184. 185. 186. 187. 188. 189. 190. 191. 192. 193. 194. 195. 196. 197. 198. 199. 200. 201. 202. 203. 204. 205. 206. 207. 208. 209. 210. 211. 212. 213. 214. 215. 216. 217. 218. 219. 220. 221. 222. 223. 224. 225. 226. 227. 228. 229. 230. 231. 232. 233. 234. 235. 236. 237. 238. 239. 240. 241. 242. 243. 244. 245. 246. 247. 248. 249. 250. 251. 252. 253. 254. 255. 256. 257. 258. 259. 260. 261. 262. 263. 264. 265. 266. 267. 268. 269. 270. 271. 272. 273. 274. 275. 276. 277. 278. 279. 280. 281. 282. 283. 284. 285. 286. 287. 288. 289. 290. 291. 292. 293. 294. 295. 296. 297. 298. 299. 300. 301. 302. 303. 304. 305. 306. 307. 308. 309. 310. 311. 312. 313. 314. 315. 316. 317. 318. 319. 320. 321. 322. 323. 324. 325. 326. 327. 328. 329. 330. 331. 332. 333. 334. 335. 336. 337. 338. 339. 340. 341. 342. 343. 344. 345. 346. 347. 348. 349. 350. 351. 352. 353. 354. 355. 356. 357. 358. 359. 360. 361. 362. 363. 364. 365. 366. 367. 368. 369. 370. 371. 372. 373. 374. 375. 376. 377. 378. 379. 380. 381. 382. 383. 384. 385. 386. 387. 388. 389. 390. 391. 392. 393. 394. 395. 396. 397. 398. 399. 400. 401. 402. 403. 404. 405. 406. 407. 408. 409. 410. 411. 412. 413. 414. 415. 416. 417. 418. 419. 420. 421. 422. 423. 424. 425. 426. 427. 428. 429. 430. 431. 432. 433. 434. 435. 436. 437. 438. 439. 440. 441. 442. 443. 444. 445. 446. 447. 448. 449. 450. 451. 452. 453. 454. 455. 456. 457. 458. 459. 460. 461. 462. 463. 464. 465. 466. 467. 468. 469. 470. 471. 472. 473. 474. 475. 476. 477. 478. 479. 480. 481. 482. 483. 484. 485. 486. 487. 488. 489. 490. 491. 492. 493. 494. 495. 496. 497. 498. 499. 500. 501. 502. 503. 504. 505. 506. 507. 508. 509. 510. 511. 512. 513. 514. 515. 516. 517. 518. 519. 520. 521. 522. 523. 524. 525. 526. 527. 528. 529. 530. 531. 532. 533. 534. 535. 536. 537. 538. 539. 540. 541. 542. 543. 544. 545. 546. 547. 548. 549. 550. 551. 552. 553. 554. 555. 556. 557. 558. 559. 560. 561. 562. 563. 564. 565. 566. 567. 568. 569. 570. 571. 572. 573. 574. 575. 576. 577. 578. 579. 580. 581. 582. 583. 584. 585. 586. 587. 588. 589. 590. 591. 592. 593. 594. 595. 596. 597. 598. 599. 600. 601. 602. 603. 604. 605. 606. 607. 608. 609. 610. 611. 612. 613. 614. 615. 616. 617. 618. 619. 620. 621. 622. 623. 624. 625. 626. 627. 628. 629. 630. 631. 632. 633. 634. 635. 636. 637. 638. 639. 640. 641. 642. 643. 644. 645. 646. 647. 648. 649. 650. 651. 652. 653. 654. 655. 656. 657. 658. 659. 660. 661. 662. 663. 664. 665. 666. 667. 668. 669. 670. 671. 672. 673. 674. 675. 676. 677. 678. 679. 680. 681. 682. 683. 684. 685. 686. 687. 688. 689. 690. 691. 692. 693. 694. 695. 696. 697. 698. 699. 700. 701. 702. 703. 704. 705. 706. 707. 708. 709. 710. 711. 712. 713. 714. 715. 716. 717. 718. 719. 720. 721. 722. 723. 724. 725. 726. 727. 728. 729. 730. 731. 732. 733. 734. 735. 736. 737. 738. 739. 740. 741. 742. 743. 744. 745. 746. 747. 748. 749. 750. 751. 752. 753. 754. 755. 756. 757. 758. 759. 760. 761. 762. 763. 764. 765. 766. 767. 768. 769. 770. 771. 772. 773. 774. 775. 776. 777. 778. 779. 780. 781. 782. 783. 784. 785. 786. 787. 788. 789. 790. 791. 792. 793. 794. 795. 796. 797. 798. 799. 800. 801. 802. 803. 804. 805. 806. 807. 808. 809. 810. 811. 812. 813. 814. 815. 816. 817. 818. 819. 820. 821. 822. 823. 824. 825. 826. 827. 828. 829. 830. 831. 832. 833. 834. 835. 836. 837. 838. 839. 840. 84

*Journal of Interpersonal Violence*

[illegible]

$\frac{1}{2} \times \frac{1}{2} = \frac{1}{4}$

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

孝悌忠信 礼义廉耻 仁勇节 忠孝 廉耻 仁勇 节

10                    7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28 29 30

1990 1991 1992 1993 1994 1995 1996 1997 1998 1999 2000 2001 2002 2003 2004 2005 2006 2007 2008 2009 2010 2011 2012 2013 2014 2015 2016 2017 2018 2019 2020 2021 2022 2023 2024 2025 2026 2027 2028 2029 2030 2031 2032 2033 2034 2035 2036 2037 2038 2039 2040 2041 2042 2043 2044 2045 2046 2047 2048 2049 2050 2051 2052 2053 2054 2055 2056 2057 2058 2059 2060 2061 2062 2063 2064 2065 2066 2067 2068 2069 2070 2071 2072 2073 2074 2075 2076 2077 2078 2079 2080 2081 2082 2083 2084 2085 2086 2087 2088 2089 2090 2091 2092 2093 2094 2095 2096 2097 2098 2099 2100 2101 2102 2103 2104 2105 2106 2107 2108 2109 2110 2111 2112 2113 2114 2115 2116 2117 2118 2119 2120 2121 2122 2123 2124 2125 2126 2127 2128 2129 2130 2131 2132 2133 2134 2135 2136 2137 2138 2139 2140 2141 2142 2143 2144 2145 2146 2147 2148 2149 2150 2151 2152 2153 2154 2155 2156 2157 2158 2159 2160 2161 2162 2163 2164 2165 2166 2167 2168 2169 2170 2171 2172 2173 2174 2175 2176 2177 2178 2179 2180 2181 2182 2183 2184 2185 2186 2187 2188 2189 2190 2191 2192 2193 2194 2195 2196 2197 2198 2199 2200 2201 2202 2203 2204 2205 2206 2207 2208 2209 2210 2211 2212 2213 2214 2215 2216 2217 2218 2219 2220 2221 2222 2223 2224 2225 2226 2227 2228 2229 2230 2231 2232 2233 2234 2235 2236 2237 2238 2239 2240 2241 2242 2243 2244 2245 2246 2247 2248 2249 2250 2251 2252 2253 2254 2255 2256 2257 2258 2259 2260 2261 2262 2263 2264 2265 2266 2267 2268 2269 2270 2271 2272 2273 2274 2275 2276 2277 2278 2279 2280 2281 2282 2283 2284 2285 2286 2287 2288 2289 2290 2291 2292 2293 2294 2295 2296 2297 2298 2299 2300 2301 2302 2303 2304 2305 2306 2307 2308 2309 2310 2311 2312 2313 2314 2315 2316 2317 2318 2319 2320 2321 2322 2323 2324 2325 2326 2327 2328 2329 2330 2331 2332 2333 2334 2335 2336 2337 2338 2339 2340 2341 2342 2343 2344 2345 2346 2347 2348 2349 2350 2351 2352 2353 2354 2355 2356 2357 2358 2359 2360 2361 2362 2363 2364 2365 2366 2367 2368 2369 2370 2371 2372 2373 2374 2375 2376 2377 2378 2379 2380 2381 2382 2383 2384 2385 2386 2387 2388 2389 2390 2391 2392 2393 2394 2395 2396 2397 2398 2399 2400 2401 2402 2403 2404 2405 2406 2407 2408 2409 2410 2411 2412 2413 2414 2415 2416 2417 2418 2419 2420 2421 2422 2423 2424 2425 2426 2427 2428 2429 2430 2431 2432 2433 2434 2435 2436 2437 2438 2439 2440 2441 2442 2443 2444 2445 2446 2447 2448 2449 2450 2451 2452 2453 2454 2455 2456 2457 2458 2459 2460 2461 2462 2463 2464 2465 2466 2467 2468 2469 2470 2471 2472 2473 2474 2475 2476 2477 2478 2479 2480 2481 2482 2483 2484 2485 2486 2487 2488 2489 2490 2491 2492 2493 2494 2495 2496 2497 2498 2499 2500 2501 2502 2503 2504 2505 2506 2507 2508 2509 2510 2511 2512 2513 2514 2515 2516 2517 2518 2519 2520 2521 2522 2523 2524 2525 2526 2527 2528 2529 2530 2531 2532 2533 2534 2535 2536 2537 2538 2539 2540 2541 2542 2543 2544 2545 2546 2547 2548 2549 2550 2551 2552 2553 2554 2555 2556 2557 2558 2559 2560 2561 2562 2563 2564 2565 2566 2567 2568 2569 2570 2571 2572 2573 2574 2575 2576 2577 2578 2579 2580 2581 2582 2583 2584 2585 2586 2587 2588 2589 2590 2591 2592 2593 2594 2595 2596 2597 2598 2599 2600 2601 2602 2603 2604 2605 2606 2607 2608 2609 2610 2611 2612 2613 2614 2615 2616 2617 2618 2619 2620 2621 2622 2623 2624 2625 2626 2627 2628 2629 2630 2631 2632 2633 2634 2635 2636 2637 2638 2639 2640 2641 2642 2643 2644 2645 2646 2647 2648 2649 2650 2651 2652 2653 2654 2655 2656 2657 2658 2659 2660 2661 2662 2663 2664 2665 2666 2667 2668 2669 2670 2671 2672 2673 2674 2675 2676 2677 2678 2679 2680 2681 2682 2683 2684 2685 2686 2687 2688 2689 2690 2691 2692 2693 2694 2695 2696 2697 2698 2699 2700 2701 2702 2703 2704 2705 2706 2707 2708 2709 2710 2711 2712 2713 2714 2715 2716 2717 2718 2719 2720 2721 2722 2723 2724 2725 2726 2727 2728 2729 2730 2731 2732 2733 2734 2735 2736 2737 2738 2739 2740 2741 2742 2743 2744 2745 2746 2747 2748 2749 2750 2751 2752 2753 2754 2755 2756 2757 2758 2759 2760 2761 2762 2763 2764 2765 2766 2767 2768 2769 2770 2771 2772 2773 2774 2775 2776 2777 2778 2779 2780 2781 2782 2783 2784 2785 2786 2787 2788 2789 2790 2791 2792 2793 2794 2795 2796 2797 2798 2799 2800 2801 2802 2803 2804 2805 2806 2807 2808

1 1' 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28 29 30 31 32

[illegible]

0 2 4 6 8 10 12 14 16 18 20 22 24 26 28 30 32 34 36 38 40 42 44 46 48 50 52 54 56 58 60 62 64 66 68 70 72 74 76 78 80 82 84 86 88 90 92 94 96 98 100

[illegible][illegible]

1990 1991 1992 1993 1994

४१ - 'को-कुल', 'कल' ५१११।

अथ माता 'धो वर' कथा ॥

'असमोक्ष्यापि रत्न' च व शब्दे ।

‘उत्तमोर्वा’ परिभाषा अनय ॥

1951 2 2 445 46-100 1 47 4-6 48 1 49 1 50 2 11

विना विचार कर विवाद : १३ : ५० : ४२९ पर ४८६

विना प्रसादः कदापि न भविष्यति । अतः प्रसादः नैव भवति ।

मध्यम वरुण अक्षिण निरय ॥ २४३॥ ॥ ११॥ ॥

सो नमः सर्वे शक्ति शक्ति शक्ति । नमः सर्वे शक्ति शक्ति शक्ति ।

६वें सूत्र की व्याख्या:-

रे पत्र पर दे आहार । अथवा ता सों दके विचार ॥  
 वय न दे पर दे दिनवाए । सो ही 'परव्यपदेश' कहाय ॥  
 आदर सहित न देवे दान । ईर्ष्या औरो के प्रति मान ॥  
 समय मुनि देवे आहार । अतिवि सविभागहि अतिचार ॥३६॥

सल्लेखना के अतिचार:-

मन:-जीवित-मरणाशंसा-मित्रानुराग-मुखानुबन्ध-निदानानि  
 ॥३७॥

व्याख्या:- जीवित मरणाशंसा दोष ।  
 मन मित्रहि अनुराग समोय ॥  
 मुखानुबन्धन और निदान ।  
 सल्लेखन अतिचार बखान ॥३७॥

७वें सूत्र की व्याख्या:-

एक धार कर से व्रत धार । फिर भी हो जीवन से प्यार ॥  
 अतिचार सो पहला होय । जीवन इच्छा कहिए सोय ॥  
 रोग आदि कष्टहि पवड़ाए । शीघ्र मरण इच्छा मन लाय ॥  
 सो दूजा अतिचार बखान । 'मरणाशंसा' ता को जान ॥  
 बेल-कूद के साथी मित्र । पूर्वहि भोगे भोग विचित्र ॥  
 जीवन-सो 'मित्रहि अनुराग' । 'मुखानुबन्ध' सुखो से राग ॥  
 भोग चाह परलोक हि होय । पंच 'निदान' कहलावे सोय ॥  
 सो पाँचों मन लीजे धार । सल्लेखना व्रतहि अतिचार ॥३७॥



३६वें सूत्र की व्याख्या -

हरे पत्र पर दे आहार । अथवा ता गो दूके विचार ॥  
 स्वयं न दे पर दे शिखाए । गो हो 'परस्परदेन' कहाय ॥  
 आदर सहित न देवे दान । ईश्वरी ओरो के प्रति मान ॥  
 अगम्य मुनि देवे आहार । अतिवि मरिभागहि अनिचार ॥३६॥

सत्त्वैतना के अनिचार:-

मूल:-जीविन-मरणाशंसा-मित्रानुराग-गुणानुबन्ध निदानानि  
 ॥३७॥

भाषा:- जीवित मरणाशंसा दोष ।  
 मन मित्रहि अनुराग समोष ॥  
 सुखानुबन्धन और निदान ।  
 सत्त्वैतन अतिचार यत्नान ॥३७॥

३७वें सूत्र की व्याख्या:-

एक बार कर से व्रत पार । फिर भी हो जीवन मे प्यार ॥  
 अतीचार सो पहना होय । जीवन इच्छा कहिए सोय ॥  
 रोग आदि कष्टहि घबड़ाए । शीघ्र मरण इच्छा मन लाय ॥  
 सो दूखा अतिचार बगान । 'मरणाशंसा' ता की जान ॥  
 मेल-कूद के साथी मित्र । पूर्वहि भोगे भोग विविध ॥  
 बिनन-गो 'मित्रहि अनुराग' । 'गुणानुबन्ध' सुखों मे राग ॥  
 भोग चाह परलोक हि होय । ऐसे 'निदान' कहलावे सोय ॥  
 सो पाँधों मन सीजे पार । सत्त्वैतना व्रतहि अनिचार ॥३७॥



इन आठों कर्मों की उत्तर प्रकृतिर्था.—

मूल.—पञ्च-नव-द्वयष्टाविंशति-चतुर्द्विषत्वारिणद्-द्वि-

पचभेदा यथाक्रमम् ॥५॥

भाषा:— पुनि प्रभेद आठों के कहे ।

पँच, नौ, द्दो, अट्ठाइस लहे ॥

चार, ब्यालिस, द्दो, पँच मान ।

सो प्रभेद हैं क्रमशः जान ॥५॥

पहले ज्ञानावरण कर्म के पाँच भेद —

मूल:—मति श्रुतावधि-मनः पर्यय केवलानाम् ॥६॥

भाषा:— ज्ञानावरण पाँच हैं मान ।

मति, श्रुत, अवधि प्रथम त्रय जान ॥

मन-पर्यय चव, केवल पंच ।

ज्ञानावरण न संशय रंच ॥६॥

छठे मूल की व्याख्या.—

इन्द्रिय ज्ञान न मन में आए । सो मतिज्ञानावरण कहाए ॥

मास्त्र पटल पर भी नहि ज्ञान । श्रुत ज्ञानावरणहि सो जान ॥

भूत-अविध्यत ज्ञान न होय । अवधि-ज्ञान-आवरणहि सोय ॥

ज्ञात न हो पर मन की यात । मन पर्यय आवरण बहात ॥

पूर्ण ज्ञान को रोंके जोय । केवल ज्ञानावरणहि सोय ॥६॥

दूसरे दर्शनावरण कर्म के ९ भेद:—

मूल:—चक्षुरवधुरवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-



वेदनीय वश गुण-दुःख होय । आयु कर्म मार रोके जोय ॥  
 अन्य कर्म भी दुगो प्रसार । भिन्न-भिन्न फल है निवार ॥  
 कर्म स्वभाव प्रकृति गो मान । बन्ध ममय हो 'स्थिति' जान ॥  
 तीव्र, मंद फल शक्ति विचार । गो 'अनुभाग-वध' निवार ॥  
 कर्म प्रकृति अरु आत्म प्रदेष्ट । संस्था मिलि हो वध विशेष ॥  
 आत्म, कर्म जग दूध ममान । धित हो 'वध प्रदेष्टि' जान ॥  
 तीव्र मन्द जस योग, कषाय । तम वधो म अन्तर आय ॥  
 'प्रकृति', 'प्रदेष्ट' हि योग बनाय । 'स्थिति' अरु 'अनुभाग' कषाय ॥  
 प्रकृति वध दो भेद बनाय । मूल अरु उत्तर प्रकृति कहाय ॥  
 मूल प्रकृति के आठ प्रभेद । उत्तर सप्त-अङ्गानि स भेद ॥३॥  
 मूल प्रकृति वध के आठ भेद.—

मूल.—आयो ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नाम-

गोत्रान्तरायः ॥४॥

भाषा:— प्रकृति बंध ठाठ नेद बताए ।

'ज्ञान', 'दर्शनावरण' कहाए ॥

तीजा 'वेदनीय' है मान ।

घोया 'मोहनीय' ही जान ॥

'आयु', 'नाम' सत 'गोत्र' कहाय ।

'अंतराय' अष्टम दुखदाय ॥४॥

'ज्ञानावरण' ढके जो ज्ञान । 'दर्शनावरण'—न हो अज्ञान ॥  
 'वेदनीय' वश सुख-दुःख होय । 'मोहनीय' सो, मोहे जोय ॥  
 'आयु'—आयु निर्धारित करे । 'नाम'—वदन, अंगादिक धरे ॥  
 उच्च, नीच कुल जासो होय । कर्म 'गोत्र' कहलावे सोय ॥  
 दानादिक में विघ्न लगाय । सो ही 'अंतराय' कहलाय ॥  
 भोजन आदिक को ब्यो साय । अस्थि, मांस, मल-मूत्र बनाय ॥  
 त्यो ही कर्म प्रकृति अनुसार । अष्ट कर्म बंधते चित्तधार ॥४॥

उन आठों कर्मों की उत्तर प्रकृतियाँ:-

मूल - पञ्च नव-द्वयष्टाविंशति-चतुष्टयत्वाग्निद्वि-

पञ्चभेदा मयात्रयम् ॥५॥

भाषा:- धुनि प्रभेद आठों के कहे ।

पंच, नौ, दश, अष्टादश लहे ॥

चार, द्वाविंश, दो, पंच मान ।

सो प्रभेद हैं क्रमशः जान ॥५॥

पञ्चमे ज्ञानावरण कर्म के पाँच भेद -

मूल:-मति श्रुतावधि-मन. पर्यय केवलानाम् ॥६॥

भाषा:- ज्ञानावरण पाँच हैं मान ।

मति, श्रुत, अवधि प्रथम त्रय जान ॥

मन-पर्यय चव, केवल पंच ।

ज्ञानावरण न संशय रंघ ॥६॥

छठे मूल की व्याख्या:-

इन्द्रिय ज्ञान न मन में आए । सो मतिज्ञानावरण कहाए ॥

शास्त्र पटन पर भी नहीं ज्ञान । श्रुत ज्ञानावरणहि सो जान ॥

भूत-अविध्यत ज्ञान न होय । अवधि-ज्ञान-आवरणहि सोय ॥

ज्ञान न हो पर मन की बात । मन पर्यय आवरण कहात ॥

पूर्ण ज्ञान को रोंके जोय । केवल ज्ञानावरणहि सोय ॥६॥

दूसरे दर्शनावरण कर्म के ९ भेद:-

मूल:-चक्षुरक्षक्षुरवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-

प्रचलाप्रचला स्तमानगुदयश्च ॥७॥

वेदनीय वश मुग-दुग होग । आयु कर्म भर रोके जोय ॥  
 अन्य कर्म भी इसी प्रकार । भिन्न-भिन्न फल है चित्तधार ॥  
 कर्म स्वभाव प्रकृति गो मान । वन्द्य ममय हो 'स्थिति' जान ॥  
 तीव्र, मन्द फल सति विचार । गो 'अनुभाग-वध' चित्तधार ॥  
 कर्म प्रकृति अरु आत्म प्रदेश । मंगरा मिलि हो वध विधाय ॥  
 आत्म, कर्म जन दूष गमान । मिल हो 'वध प्रदेश' जान ॥  
 तीव्र मन्द जस योग, कषाय । गम यथों में अन्तर आय ॥  
 'प्रकृति', 'प्रदेश' हि योग बनाय । 'स्थिति' अरु 'अनुभाग' कषाय ॥  
 प्रकृति वध दो भेद बनाय । मूल अरु उत्तर प्रकृति कहाय ॥  
 मूल प्रकृति के आठ प्रभेद । उत्तर शन-प्रकृतितिस भेद ॥३॥  
 मूल प्रकृति वध के आठ भेद —

मूलः—आयो ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नाम-

गोत्रान्तरायाः ॥४॥

भाषाः— प्रकृति वध आठ भेद बताए ।  
 'ज्ञान', 'दर्शनावरण' कहाए ॥  
 तीजा 'वेदनीय' है मान ।  
 चौथा 'मोहनीय' ही जान ॥  
 'आयु', 'नाम' सत 'गोत्र' कहाय ।  
 'अन्तराय' अष्टन दुखदाय ॥४॥

'ज्ञानावरण' ढके जो ज्ञान । 'दर्शनावरण'—न हो श्रद्धान ॥  
 'वेदनीय' वश मुल-दुख होय । 'मोहनीय' सो, मोहे जोय ॥  
 'आयु'—आयु निर्धारित करे । 'नाम'—वदन, अंगादिक धरे ॥  
 उच्च, नीच कुल जासो होय । कर्म 'गोत्र' कहलावे सोय ॥  
 दानादिक में विघ्न लगाय । सो ही 'अन्तराय' कहलाम ॥  
 भोजन आदिक की च्यो खाय । अस्थि, मांस, मल-मूत्र बनाय ॥  
 त्यों ही कर्म प्रकृति अनुसार । अष्ट कर्म बंधते चित्तधार ॥४॥

वीरे सर्व मोहनीय के २८ भेदः—

पुनः—दशान-चारित्रमोहनीयकरपाप-वपापवेदनीयाम्यामित्र-  
द्वि-नक्ष-योदशभेदाः सम्यक्-मिष्यात्-अदुनया-  
कपाय-वशावो हास्य-वररति-शोक-मय-जुगुप्सा-  
स्त्री-पुन-पुन-कषेदा अनन्तानुबन्धप्रपाद-  
प्रपाद-मय-मय-विद-मय-मय-मय-मय-मय-मय-  
माया लोभा ॥९॥

:- मोहनीय के मुनिए मित्र ।

मुष्य भेद दशान, चारित्र ॥

दशान मोहनीय प्रय जान ।

भेद प्रयम 'सम्यक्' यत्नान ॥

दूगा सो 'मिष्यात्' यत्नाए ।

प्रय 'सम्यक्-मिष्यात्' कहाए ॥

चारित मोहनीय दो मान ।

'नो-कपाय-वेदन' नो जान ॥

हास्य, वरति, रति, शोक यक्षान ।

मय, पुनि पष्ट जुगुप्सा जान ॥

स्त्री-पुन-पुन-सक वेद ॥

'वेदनीय अकपाय'हि भेद ॥

दूगा 'वेदनीय सकपाय' ।

ता के सोलह भेद यत्नाए ॥

श्रीध, मान, माया अद लोभ ।

अनन्तानुबन्धी चय शोभ ॥

न'य' = मेरी वर्णनायकता ही माता ।  
 यही, यन्त्र, यही है यही माता ।  
 'केव' = 'ईश' है यही माता ।  
 मन्त्रो = 'ईश्वरीय' यही ।  
 ऊँ = यही ही 'यही' माता ।  
 'यही' यही यही यही यही ।  
 माता ही ही यही ही माता ।  
 'यही' यही यही यही यही ।

२३ एव चो ३॥१॥ —

[illegible]

ਧੁਰ:-ਸਦਾਸਤੁੰ ਥੰ ॥੫॥

:- येदनीय दो भेद दण्डान ।  
साता और असाता जान ॥  
मुणानुभव हो 'साता' काज ।  
मुणानुमूति 'असाता' राज ॥८॥

ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਦੇ ਸਾਹਿਬੀਦ ਦੇ ੨੮ ਖੇਦ:-

[illegible]

:- मोहनोय के मुनिग गिर ।

मृत्युं भिर दशमं, चारित्र ॥

दशमं मोहनीयं त्रयं ज्ञानम् ।

भैर प्रथम 'सम्भव' अस्तान ॥

दृष्टा सो 'मिथ्यात्व' यत्ताए ।

त्रेय 'मन्त्र-मिथ्यात्व' कहाए ॥

पारित मोहनीय दो मान ।

‘नो-कवाय-पेइन’ नो जाग ॥

हात्त, व्यरति, रति, शोक यत्तान् ।

मय, पुनि पष्ट जुगुप्ता जान ॥

स्त्री-पुंस-ननुसारः      वेद ॥

‘घेदनीय अरुपाय’हि भेद ॥

दूना 'विहारीय' सहायाम' ।

ता क-सात्तह . नंद यताय ।

शेष, मान, माया अद १००

॥ १ ॥

पुं० ल० 'संज्ञानानादयः' ।

આમની પુત્રિ સંસ્કૃતનાં શાળામાં

श्रीः पीठ मङ्गलद्वयं तत्र ॥६॥

• ୪ ମୁଦ୍ରା ବୋ ଶ୍ରୀମଦ୍ଭଗବତ୍

[illegible]

पाँचवें आयु कर्म के ४ भेदः—

मूलः—नारक-नैर्ऋत्योन्-मानुष्य-दैवानि ॥१०॥

भाषाः— आयु कर्म चय भेद बताए ।

नारक अह तिर्यञ्च कहाए ॥

मानुष्यायु तीजा, चय देव ।

सो कर्मानुसार गुन सेव ॥१०॥

१०वें मूत्र की व्याख्याः—

होने पर जीवित बहलाए । अह अभाव में मृत्यु बताए ॥

मत्र धारण मे कारण जोय । भविजन 'आयु' कहावे सोय ॥

आयु कर्म वन गतियाँ चार । निश्चित होंवें उक्त प्रकार ॥१०॥

छटे नाम कर्म को ४२ प्रकृतियाँ :—

मूल-गति-जाति-शरीराङ्गोपाङ्ग-निर्माण-बन्धन-सघात-संस्थान-

सहनन-स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णानुपूर्य्यागुरुलघूपघात-परघाता-

तपोद्योगोच्छ्वास-विहायोगतयः प्रत्येक शरीर-वस्तु-मुमग-

मुस्वर-शुभ गूढम-पर्याप्ति स्थिरादेय-यशः कीर्ति-सेतराणि

तीर्थकरत्वं च ॥११॥

भाषाः— नाम कर्म हैं व्याप्ति मान ।

- 'गति'पुनि'जाति', शरीर'व्यखान ॥

'अंगोपांग' तथा 'निर्माण' ।

'बंधन', 'सघातहि', 'संस्थान' ॥

'सहनन', स्पर्शहि', 'रस', 'गंध' ।

'वर्ण', 'आनुपूर्य्य' हि हैं बंध ॥

पुनः 'अगुरुलघु' अह 'उपघात' ।





६४ मूत्र की व्याख्या:—

दमो धर्म का उच्च स्वरूप । उत्तम सहित मुद्राएँ अनूप ॥  
 श्लोक काज पर 'क्षमा' प्रदान । गर्व हीनता 'मार्दव' जान ॥  
 मन-वच-काय कुटिलता तजे । सो ही 'आर्जव' गुण मे सजे ॥  
 'शौच' कहावे लोभ अभाव । सुन्दर 'सत्य' वचन मुख लाव ॥  
 राग हीनता सयम जान । इन्द्रिय, प्राणि भेद दो मान ॥  
 धन उपवासहि 'तप' बतलाए । तजे परिग्रह 'त्याग' कहाए ॥  
 सरीरादि मे ममता नाय । सो 'आश्रित्य' धर्म कहाय ॥  
 स्त्री-विषय आदि में राग । 'ब्रह्मचर्य' मे इनका त्याग ॥६॥  
 वारह अनुप्रेक्षा (भावना):—

मूल:—अनित्याशरण-संसारैकत्वान्यत्वानुच्यायव-संवर-निर्जरा-  
 लोक-बोधिदुर्लभ-धर्मस्वात्मगत-तत्त्वानुचिन्तन-मनुप्रेक्षा ॥७॥

भाषा:— वारह अनुप्रेक्षा चित्तधार ।  
 सो 'अनित्य', 'अशरण', 'संसार' ॥  
 'एकत्व'हि 'अन्यत्व' यत्ताय ।  
 नायाहि 'अनुचि' धूणित है काय ॥  
 'आश्रय', 'संवर' अरु 'निर्जरा' ।  
 'लोक', 'बोधिदुर्लभ' है धरा ॥  
 'धर्म' हि स्वाख्यातत्य' दत्तान ।  
 भावनाएँ संवर हिन जान ॥७॥

७४ मूत्र की व्याख्या:—

वारह अनुप्रेक्षा विख्यात । मनहि भावना हो दिन रात ॥



मूलः—एकादश जिन ॥११॥

भाषाः— 'सहें परीपह जिन भगवान ।

अधिकाधिक ग्यारह ही जान ॥११॥

११वें मूल की व्याख्याः—

चार घातिवा कर्म अभाव । वेदनीय का कुछ सद्भाव ॥

ग्यारह पवित्र संभव जान । अधिकाधिक तेरह गुणवान ॥

भूख, प्यास अहं गर्मी, शीत । 'दण-मसक' अरु 'चर्या' मीत ॥

गम्या, वध, मल, रोग बन्धान । 'तुण-कर्म' सब ग्यारह जान ॥

मोहनीय का उदय न होय । शक्तिहीन हैं परिपह सोय ॥

वेदनीय कुछ उदय विचार । वही परीपह सो उपचार ॥

शक्तिहीन विष के सम जान । कहने ही भर की सो मान ॥११॥

मूलः—बादरसाम्पराये सर्वे ॥१२॥

भाषाः— 'बादर साम्पराय गुणवान ।

पद से ले कर नी तक जान ॥

स्थूल कषाय सहित हैं सोय ।

सभी परीपह इनमें होय ॥१२॥

जिम कर्म के उदय से कौन सो परीपह होती हैं (१६वें मूल तक)ः—

मूलः—ज्ञानावरणे प्रजाजाने ॥१३॥

भाषाः— ज्ञानावरण कर्म से मान ।

परिपह 'प्रजा' अरु अज्ञान ॥१३॥

१३वें मूल की व्याख्याः—

निज पादित्य सर्व नहि होय । 'प्रजा' परिपह जीते सोय ॥

अज्ञानी कह दे धिक्कार । मन में तनिक न होय विचार ॥

ज्ञान प्राप्ति मे ही दे ध्यान । जयी परीपह सो अज्ञान ॥१३॥





भाषा -

( १४६ )

बाह्य तपहि पट भेद बताए ।  
'अनशन', 'अवमोदय' कहाए ॥  
तीजा 'वृत्तिपरीसंख्यान' ।  
चौथा 'रसपरित्याग' बखान ॥  
पंच 'विविक्त शय्यासन' रहा ।  
'काय बलेश' तप अंतिम कहा ॥ १६ ॥

१९वें सूत्र की व्याख्या -

मुख्य भेद तप के दो मान । 'बाह्य' और 'अभ्यंतर' जान ॥  
पुनि पट भेद प्रत्येक विचार । सो करते मुनिए चितधार ॥  
यश धनादि फल चाह न जान । समय मिटि हेतु ही मान ॥  
भोजनादि को त्यागे जोय । 'अनशन' तप को पाले सोय ॥  
ताहि हेतु ले अस्वाहार । 'अवमोदय' तपहि चितधार ॥  
मुनि आहार-नियम मन ठान । सो तप 'वृत्तिपरीसंख्यान' ॥  
दूष दही, घी, मीठा, तेल । नमक त्याग रस परिपह शैल ॥  
दमन करे रसना जो कोय । 'रस परित्याग' करे तप सोय ॥  
ब्रह्मचर्य साधन, स्वाध्याय । जतु विहीन जगह मे जाय ॥  
आसनादि एगान-स्थान । मो 'विविक्त शय्यासन' जान ॥  
वृक्ष तले गर्भी मे जाए । शीत गुले मे ध्यान लगाए ॥  
पट सहन का हो अभ्यास । 'काय बलेश' तप कठिन प्रयास ॥  
'गह्र त्रिया' जानें सब कोय । कहे बाह्य तप ताते सोय ॥  
तप बलेश' मुद साधा जाए । 'परिपह' सोइ अचानक आए ॥ १९ ॥

शुत केवली सहें पुनि मान ।

धर्म, आदि शुक्लहि दो ध्यान ॥३७॥

३७वें सूत्र की व्याख्या:—

चौदह पूर्वहि आता जोय । शुन केवली कहाये सोय ॥

अष्टम से द्वादश गुणधान । होते आदि शुक्ल दो ध्यान ॥

जइते ममय अंगि हो 'धर्म' । ध्यान बाद में शुक्लहि मर्म ॥

शुक्ल ध्यान चव भेद यत्नान । किया मूत्र उन्तानिस जान ॥३७॥

मूत्र.— परे केवलिनः ॥३८॥

भाषा:— दोय शुक्ल दो करहि प्रयोग ।

सो केवली सयोग, अयोग ॥३८॥

३८वें सूत्र की व्याख्या:—

मुनि जो हैं तेरह गुणधान । तिन्हें सयोग केवली जान ॥

जो चौदह गुणधान हि जाए । सो अयोग केवली कहाए ॥३८॥

शुक्ल ध्यान के भेद:—

मूल—पुनः पूर्वकत्ववितर्क—सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति—व्युपरतक्रिया-

निवर्त्तनि ॥३९॥

भाषा.— शुक्ल ध्यान चव भेद यत्नाए ।

इक 'पुनः पूर्वकत्ववितर्क' कहाए ॥

पुनि 'एकत्व वितर्क' यत्नान ।

.. 'सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति' हिजान ॥

'व्युपरत क्रियानिवर्त्ति' हि अंत ।

लक्षण नाम समान सहंत ॥३९॥



( १५४ )

समस्त रीद्र ध्यान नहीं मान । रीद्र साध नहीं संय-  
थतिहि कृष्ण, नील, कापोत । जिनकी लेशमा तिनके  
तप्त लोह ज्यो जल सोलाय । रीद्र ध्यान त्यो कर्म तिच

धर्म ध्यान का स्वरूप:—

मूल:—आज्ञापाय-विपाक-संस्थान-विचयाय धर्म्यम् ॥३६॥

भाषा — धर्म ध्यान चव भेद बताय ।  
प्रथम 'आज्ञा' और 'अपाय' ॥  
प्रथ 'विपाक' चौथा 'संस्थान' ।  
सो विचार या विचय बखान ॥३६॥

३६वें सूत्र की व्याख्या.—

मद बुद्धि, तद्गुण हि अभाव । मूढम युक्ति वश ग्रहण न भाव ॥  
तब आगम जो तत्व बताय । 'आज्ञा' सो श्रद्धान कहाय ॥  
अथवा स्वय हीय गुणवान । दे औरों को कहे जान ॥  
बिनन सो, जिनधर्म प्रचार । 'आज्ञा विचय' सभी विचार ॥  
मिरया दर्शन-ज्ञान-चरित । स्व, पर दूर हो कहे मित्र ॥  
कहे अप छूटे ससार । बिनन सोइ 'अपाय' विचार ॥  
भिन्न-भिन्न जो है गुणवान । कर्म-बंध किन मे तिन जान ॥  
कर्म निजंता कहे होय । ध्यान 'विपाक' कहावे सोय ॥  
बितन-त्रग स्वभाव, आकार । सो 'संस्थान विचय' बिनचार ॥  
धर्म ध्यान अधिकारी जान । धर्म, तैव, पट, सत्तम गुणवान ॥३६॥  
सुख ध्यान के स्वामी: —  
मूल:—गुणवै चायै पूर्वविद: ॥३७॥

जब बसों की विपत्ति जान । मो प्रवार हो प्राप्ति समान ॥  
 ताहि समय भी होवे स्थान । 'गुह्य त्रिषा प्रतिपात' ब्रह्मान ॥  
 पशहि स्थान पुनि मुक्ता ब्रह्मा ॥ 'धुनरत त्रिषा-निबन्धि ब्रह्मा ॥  
 ब्रह्मगोप्यज्ञान तथा त्रय योग । होतुं न विपत्ति मात्र प्रयोग ॥  
 हृमन्-धनन सब हो दस जात । आगद बस समस्त ब्रह्मा ॥  
 शक्ति निर्वरा वेश होय । बहूँ अयोग-बेवसी होय ॥  
 स्थान अग्नि में बसं जपात । भाग्य गुह्य ब्रह्म बने जात ॥  
 रत्ननगर मुनि आनन जान । तब पावे निर्वाण मदान ॥४४॥

सुन्दरदृष्टिों के अतमान निर्वरा—

मूलः—सम्यग्दृष्टि आधर-विरतानन्तविषयज्ञ दर्शनमोह-  
 दास्योत्तम्योत्तरान्तमोह-दायक-धीणमोह-जिनाः  
 क्रमशोऽस्यन्द-गुणनिर्वरा ॥४५॥

भाषाः— 'सम्यग्दृष्टी' 'आधर' मान ।  
 'विरत', 'अनन्तविषयज्ञ' जान ॥  
 'दर्शनमोह दायक', 'उपशमक' ।  
 पुनि 'उपशान्त मोह' अथ 'दायक' ॥  
 'धीण मोह', 'जिन' जो निर्जरा ।  
 'असंस्पृष्टान गुण' क्रमशः करा ॥४५॥

४५वें मूल की व्याख्याः—

बसं निर्वरा सीजे जान । सब में होती नही समान ॥  
 दस स्थान विपुलि निर्वरा । अगुह्यात गुण क्रमशः करा ॥  
 'अविरत सम्यग्दृष्टी' जान । पहुँचे से धीरे गुणधान ॥

सीधा वदन, खुले अथ नैन । स्वासोच्छ्वास मंद सुख  
मस्तक उर या नाभि प्रदेश । पर कर मन एकाग्र वि  
दांत मिले, मुख स्मिति होय । ध्यान मुमुक्षु बताया सं  
सत्तम से अष्टम गुणयान । द्रव्य, भाव परमागू ध्या  
सोइ समय होवे बीचार । ध्येय, वचन, योगहि वितथा  
मोहनीय शय, उपनन हेतु । सो 'पृथक्त्व वितर्क'हि सेतु

मोहनीय के शय हिन जान । सो ध्याता मन निश्चय ठान ॥  
दूर हटा तीनों बीचार । मुद्ध अनन्तगुणा बिनवार ॥  
मन थिर कर द्वादस गुणयान । पीछे पुन. न हटता जान ॥  
धाति-कर्म ध्यान-अग्नि जनाय । सो 'एकत्व-वितर्क' कहाय ॥

कर्म पटल हट, गुरुं समान । केवल ज्ञान प्रकट हो जान ॥  
या तव पद केवलि, अर्हन्त । करें विशार आयु पर्यन्त ॥  
वेद, नाम, गोत्र, आयु बताय । अन्तमुंहनं शेष रह जाय ॥  
तत्रे वचन, मन, वादर-काय । गूढम काय योगहि रह जाय ॥  
ताहि समय जो होवे ध्यान । 'गूढम किंवा प्रतिपात' बगान ॥  
अन्तमुंहनं आयु हो शेष । तब कर्मन विजि अधिक विशेष ॥  
गमुद्धान करने मुनि मान । भाट समय लगने है जान ॥  
आत्म प्रदेशहि दग्धकार । प्रथम समय 'कैतार्' विचार ॥  
पुनि कपाट आकार बनाए । तीत्रे प्रउर रूप 'कैताए' ॥  
चोदे समय करें विस्तार । आत्मप्रदेशहि सोझकार ॥  
मो हो जन से पटने आए । अष्टम समय शरीर समाए ॥

सब कर्मों की स्थिति ज्ञान । सो प्रकार हो प्राप्ति समान ॥  
 साहि समान भी होवे ज्ञान । 'सूक्ष्म विद्या प्रविद्या' बताए ॥  
 अर्द्धि त्याग पुनि सुख बन जाए । 'धुनरन विद्या-निबन्धि' कहाए ॥  
 इसासोच्छ्रयान लया प्रव मोह । होत न विधिग मात्र प्रयोग ॥  
 हनन-पन्नन सब हो एक जाए । आगव पय समस्त नगाए ॥  
 शक्ति निर्वंश वैश होय । कहें अज्ञान-बेबली सोय ॥  
 ध्यान अग्नि में कर्म जमाए । आत्म शुद्ध कथन बन जाए ॥  
 रत्ननयन मुख ध्यानम ज्ञान । सब पावे निर्वाण महान ॥४४॥

सम्पददृष्टियों के असमान निर्वंश —

मूलः—सम्पददृष्टि धावक-विरतानन्तविशेष दमनमोह-  
 क्षातरोषममोहताम्यमोह-क्षयक-क्षीणमोह-जिना-  
 कमलोत्पल्येज-गुणनिर्वंशः ॥४५॥

भाषाः— 'सम्पददृष्टी' 'धावक' मान ।  
 'विरत', 'अनन्तविशेषक' ज्ञान ॥  
 'दमनमोह क्षयक', 'उपशमक' ।  
 पुनि 'उपशान्त मोह' अथ 'क्षयक' ॥  
 'क्षीण मोह', 'जिन' जी निर्वंश ।

'असंस्पृष्ट गुण' क्रमशः करा ॥४५॥

४५वें सूत्र की व्याख्या—

कर्म निर्वंश सौत्रे ज्ञान । सब में होती नहीं समान ॥  
 दस स्थान विशुद्धि निर्वंश । असंस्पृष्ट गुण क्रमशः करा ॥  
 'अविरत सम्पददृष्टी' ज्ञान । पहले से चौथे गुणधान ॥

'श्रावक' अगुवन सहित कहाए । पंचम गुणस्थान बतलाए ॥  
 'विरत' महामुनि कहिए सोय । गुणस्थान षट्, सप्तम जोय ॥  
 अनन्तानुबन्धी नहि जोय । सोइ 'अनन्त वियोजक' होय ॥  
 दश-मोह सम्पूर्ण ! नसाए । 'दशान मोह दापक' कहलाए ॥  
 साधु 'उपशमक' होते जान । अठ, नौ और दसम गुणस्थान ॥  
 चारित-मोह नसावे जान । 'उपशान्त'हि ग्यारह गुणस्थान ॥  
 श्रेणि 'क्षपक' आरोही सोय । चारित-मोह तनिक नहि जोय ॥  
 सो भी अठ, नौ, दस गुणस्थान । उपशम, नाश भेद है जान ॥  
 'क्षीण-मोह' द्वादस गुणस्थान । चारित-मोह न नाम निशान ॥  
 चार घातिया पूर्ण नसाए । 'जिन' तेरह गुणस्थान कहाए ॥  
 चव से ले आगे गुणस्थान । अधिकाधिक्य विशुद्धि बतान ॥  
 असंख्यात गुण कर्म नसाए । क्रम आगे-आगे ज्यो जाए ॥४५॥

निर्गन्धों के भेद :—

मूल :—पुलाक-वकुश-कुशील-निर्गन्ध-स्नातका निर्गन्धाः ॥४६॥

भाषा :— निर्गन्धहि पंच भेद बताए ।

प्रथम 'पुलाक', 'वकुश' कहलाए ॥

प्रथ 'कुशील', 'निर्गन्धहि' चार ।

'स्नातक' ही पंचम चितधार ॥४६॥

४६ वें सूत्र की व्याख्या :—

उत्तर गुण से कोरे निरे । धून गुणों में जब तक गिरे ॥

बिना पके जो घान समान । सो 'पुलाक' कहलाते जान ॥

मूल गुणों को पाचें जोय । दिखें मुदर्शन इच्छा होय ॥

सभी निर्वेद आचार । निज उपवर्गहि मोह विचार ॥  
 मे मम इच्छा सा जाय । शक्ति प्राप्ति के करहि उपाय ॥  
 मुनि 'बहुज' मनमिनि पाय । पट गणेश उयो परदेशर ॥  
 मुनीन के भेद बहाए । 'प्रतिशेवना', बघाय बहाए ॥  
 भूत-द्वार गुण जाय । जय-त्रय उतर दीय बघाय ॥  
 'प्रतिशेवना' बहाए सोय । 'प्राप्त' प्रत्य प्रतिशेवन होय ॥  
 'सम्पन्न' सबहि बग विद्या । नाम-बघाय बुधीत हि दिया ॥  
 नीय का उदय न मान । पानि बसे जल रेण समान ॥  
 न मान निहट ही होय । मुनि 'निष्पे' बहाए सोय ॥  
 मा सो 'निष्पे' बघाय । जो प्याह, धारह गुणधान ॥  
 मर सोहह गुणधान । के मुनि हैं सर्वज्ञ समान ॥  
 न-समे सब ही विननाए । सो बरहि 'स्वात्म' बहाए ॥  
 विषयता ही पारित । सब निष्पेय विष ॥  
 ह परिषह अतर-बाह । सम्पद-दोटी सभी बहाय ॥४६॥  
 क आदि मुनियों की अन्य विशेषताएँ —

:- समम-अन-प्रतिशेवना—सीपे—विह—सेवोत्पाद—  
 रधान—विद्वान्, साध्या ॥४७॥

या :- निगन्त्यादि मुनिन में मान ।

निम्न अपेक्षा अंतर जान ॥

'संयम', 'अत' में अंतर लहें ।

'प्रतिशेवना', 'सीपे' पुनि कहें ॥

'सिग' हि 'सेवो' अंतर जान ।

'उपपाद' हि अह भेद 'स्वान' ॥४७॥

# तत्त्वार्थ सूत्र

का

## पारिभाषिक शब्द संकेत

|                   |        |                |        |
|-------------------|--------|----------------|--------|
| अकण्ठ्य वेदनीय    | १२४.११ | अतिचार         | १०७.१२ |
| अकाम निर्जरा      | ८९.९   | अयिनिमविभाग    | १०६.१५ |
| अकाल मरण          | ३२.२५  | अनिभारारोपण    | १०८.२१ |
| अक्षिप्त ज्ञान    | ८.१५   | अदर्शन परिग्रह | १४२.९  |
| अमारी             | १०४.२२ | अधर्म द्रव्य   | ९९.१६  |
| अमृतत्व नाम       | १२७.१९ | अधिकरण         | ८२.१   |
| अक्ष प्रविष्ट     | १०.९   | अधिकरण अनुयोग  | ४.२०   |
| अक्ष वाद्य        | १०.१०  | अधिगमत्र       | २.१८   |
| अक्षोपान्त नाम    | १२६.१८ | अधोऽनित्यम     | १११.१३ |
| अज्ञान भाव        | ८९.२३  | अध्व ज्ञान     | ८.१५   |
| अज्ञान परिग्रह    | १४२.८  | अधोपोक         | ३३.९   |
| अज्ञान मिथ्यात्व  | ११७.२२ | अनगारी         | १०४.११ |
| अक्षय दर्शन       | २०.१४  | अनन्य अतिचार   | ११०.२१ |
| अक्षिप्त योनि     | २८.२०  | अननुगामी       | ११.१०  |
| अक्षीर हन भावनात् | १७.१०  | अनन्य विधोऽक   | १६०.३  |
| अक्षीय            | ९५.९   | अनन्यानुवन्धी  | १२६.१३ |
| अक्षीवाधिकरण      | ८१.१   | अनन्य दण्ड     | ११२.१६ |
| अक्षुब्ध          | ७३.१४  | अनादि          | ७५.२२  |
| अक्षुब्ध          | ९५.२२  | अनवस्थित       | ११.१६  |
| अक्षय             | २९.९   | अनन्य वाङ्मय   | १४६.११ |
| अक्षी ईश          | ४२.१४  | अनन्द          | १३.११  |

• इन शब्दों में पहले शब्द गूट के और दूसरे शब्द पणि के सूचक हैं।

|             |        |                       |        |
|-------------|--------|-----------------------|--------|
| उत्तरक      | २०.११  | उत्तराद जन्म          | २८.९   |
| उत्तरक शरीर | १२.१   | उपमीय भउत्तराद        | १२९.१८ |
| उत्तराद     | ७३.९   | उत्तरमीय परिभोग अनर्थ | ११२.२४ |
| उत्तराद     | ११०.१६ | उत्तरमीय              | २२.९   |
| उत्तराद     | ४९.५   | उत्तराद               | १५०.१८ |
| उत्तराद     | १५२.१९ | उत्तराद               | १०६.८  |
| उत्तराद     | ८०.२२  | उत्तराद               | १४८.१८ |
| उत्तराद     | ९९.१२  | उत्तराद               | १४९.१५ |
| उत्तराद     | ७.२२   | उत्तराद               | १७.५   |
| उत्तराद     | ८.१५   | उत्तराद               | १६०.९  |
| उत्तराद     | १२९.५  | उत्तराद               | १११.१२ |
| उत्तराद     | १२७.२४ | उत्तराद               | १६९.१७ |
| उत्तराद     | ७३.११  | उत्तराद               | १५८.१० |
| उत्तराद     | १२९.२४ | उत्तराद               | १४०.३  |
| उत्तराद     | ७५.२   | उत्तराद               | ८.१५   |
| उत्तराद     | १३८.१३ | उत्तराद               | ११७.१९ |
| उत्तराद     | ४३.९   | उत्तराद               | १६.५   |
| उत्तराद     | १२७.२३ | उत्तराद               | १३८.११ |
| उत्तराद     | २४.१०  | उत्तराद               | १७.१९  |
| उत्तराद     | ८३.२०  | उत्तराद               | २९.४   |
| उत्तराद     | ९९.२०  | उत्तराद               | १८.१२  |
| उत्तराद     | ८४.८   | उत्तराद               | २१.१   |
| उत्तराद     | १२७.२१ | उत्तराद               | १८.१८  |
| उत्तराद     | १४९.६  | उत्तराद               | ५.१०   |
|             |        | उत्तराद               | १५१.१२ |



|                    |        |                    |        |
|--------------------|--------|--------------------|--------|
| अर्धं नराच         | १२७.११ | अमत्राप्तानृपाटिका | १२७.११ |
| अर्पित             | ७५/२१  | अमाता वेदनीय       | १२२.२१ |
| अलाभ परिपह         | १४२.३  | अगिद्वन्व          | ११.१८  |
| अलोकाकाश           | ६८.१३  | अस्थिर नाम         | १२८.२० |
| अल्प ज्ञान         | ८.१४   | अहमिन्द्र          | ५६.१६  |
| अल्पबहुत्व         | ५.१२   | आ                  |        |
| अवगाहना            | १६८.१२ | आकाश द्रव्य        | ६५.१६  |
| अवग्रह             | ७.२१   | आकिञ्चन धर्म       | १३९.८  |
| अवधि ज्ञान         | ५.१६   | आमोश परिपह         | १४१.२३ |
| अवय                | ९१.८   | आचार्य             | १४९.१४ |
| अवमोक्षं बाह्यतप   | १४६.१२ | आज्ञा विषय         | १५४.१४ |
| अवमपिणी            | ४३.९   | आतप नाम            | १२७.२३ |
| अवस्थिति           | ४३.२०  | आत्मरक्षा          | ४८.१०  |
| अवाय               | ७.२४   | आदान विशेषण        | ९६.१३  |
| अविपाक निजंरा      | १३२.२३ | आदेय नाम           | १२८.२१ |
| अविभागी प्रतिच्छेद | ७६.६   | आनयन               | ११२.३  |
| अविनेय             | १००.१२ | आनुपूर्व्य         | १२७.१७ |
| अशिरति             | ११८.३  | आभियोग्य           | ४८.१४  |
| अशरण अनुप्रेक्षा   | १४०.१  | आम्नाय स्वाध्याय   | १५०.७  |
| अशुचि "            | १४०.५  | आयुवर्म            | १२५.१  |
| अशुभ नाम           | १२८.१३ | आरम्भ              | ८२.१९  |
| अशुभ योन           | ८०.४   | आर्जव धर्म         | १३९.४  |
| अशुभ अशुचि         | १०६.३  | आर्ज ध्यान         | १५१.२१ |
| अशु                | ७५.७   | आलोचित पान भोजन    | ९६.१४  |
| असंगत्व            | १६७.९  | आलोचना             | १४८.५  |
| अमज्ञी             | २६.४   | आमादना             | ८४.८   |

|                 |        |                    |        |
|-----------------|--------|--------------------|--------|
| आहारक           | २७.११  | उपपाद जन्म         | २८९    |
| आहारक शरीर      | ३२.१   | उपभोग अंतराय       | १२९.१८ |
| ई               |        | उपभोग परिभोग अनर्थ | ११२.२४ |
| ईश्वर सदाश      | ७३.९   | उपयोग              | २२९    |
| ईश्वरिणी        | ११०.१६ | उपधि               | १५०.१८ |
| इन्द्र          | ४९.५   | उपवास              | १०६.८  |
| इष्ट वियोग      | १५२.१९ | उपस्थापना          | १४८.१८ |
| ई               |        | उपाध्याय           | १४९.१५ |
| ईशान्य आत्मव    | ८०.२२  | उपशम               | १७.५   |
| ईश्वर समिति     | ९६.१२  | उपशात (गुण०)       | १९०.६  |
| ईश्वर           | ७.२२   | उपशान्तिजन्म       | १११.१२ |
| उ, ऊ            |        | उपशान्ति           | १६९.१७ |
| उत्तम (ज्ञान)   | ८.१५   | ए                  |        |
| उच्च मोक्ष      | १२९.४  | एकत्व वितर्क       | १५८.१० |
| उद्धाम नाम      | १२७.२४ | एकत्व अनुप्राशा    | १४०.३  |
| उत्तर           | ७३.११  | एक विधि            | ८.१५   |
| उत्कृष्ट स्थिति | १२९.२४ | एकान्त मिथ्यात्व   | ११७.१६ |
| उत्पाद          | ७५.२   | एवंभूत नय          | १६.५   |
| उत्तम समिति     | १३८.१३ | एषणा समिति         | १३८.११ |
| उत्तमविणी       | ४३.९   | औ, अं, ऋ           |        |
| उद्योग नाम      | १२७.२३ | औद्योगिक भाव       | १७.१९  |
| उपकरण इन्द्रिय  | २४.१०  | औद्योगिक शरीर      | २९.४   |
| उपकरण सयोग      | ८३.२०  | औपशमिक चरित्र      | १८.१२  |
| उपगूहन          | ११.२०  | औपशमिक भाव         | २१.१   |
| उपघात           | ८४.८   | औपशमिक सम्यक्त्व   | १८.१८  |
| उपघात नाम       | १२७.२१ | अंतर अनुयोग        | ५.१०   |
| उपधार विनय      | १४९.६  | अतर्पुर्द्वय       | १५१.१२ |

|                    |        |                   |        |
|--------------------|--------|-------------------|--------|
| अर्थ नराच          | १२७.११ | जगप्रज्ञामुपाटिका | १२७.११ |
| अर्पित             | ७५.२१  | अमाना वेदनीय      | १२२.२३ |
| अलाभ परिपह         | १४२.३  | अमिद्वन्व         | ९१.१८  |
| अलोकाकाश           | ६८.१३  | अस्थिर नाम        | १२८.२० |
| अल्प ज्ञान         | ८.१४   | अहमिन्द्र         | ५४.१६  |
| अल्पबहुत्व         | ५.१२   | आ                 |        |
| अवगाहना            | १६८.१२ | आकाश द्रव्य       | ६५.१६  |
| अवग्रह             | ७.२१   | आकिंचन धर्म       | १३९.८  |
| अवधि ज्ञान         | ५.१६   | आश्रोग परिपह      | १४१.२३ |
| अवय                | ९९.८   | आचार्य            | १४९.१४ |
| अवमोदर्थ बाह्यतप   | १४६.१२ | आज्ञा विचय        | १५४.१४ |
| अवमर्षिणी          | ४३.९   | आतप नाम           | १२७.२३ |
| अवस्थिति           | ४३.२०  | आत्मरक्षा         | ४८.१०  |
| अवाय               | ७.२४   | आदान निशेषण       | ९६.१३  |
| अविपाक निर्जरा     | १३२.२३ | आदेय नाम          | १२८.२१ |
| अविभागी प्रतिच्छेद | ७६.६   | आनयन              | ११२.३  |
| अविनेय             | १००.१२ | आनुष्यं           | १२७.१७ |
| अदिरति             | ११८.३  | आभिषेक            | ४८.१४  |
| अशरण अनुप्रेक्षा   | १४०.१  | आम्नाय स्वाध्याय  | १५०.७  |
| अशुचि "            | १४०.५  | आमुकर्म           | १२५.१  |
| अशुभ नाम           | १२८.१३ | आरम्भ             | ८२.१९  |
| अशुभ योग           | ८०.४   | आजं व धर्म        | १३९.४  |
| अशुभ धृति          | १०९.३  | आनं ध्यान         | १५१.२१ |
| अ । ।              | ७५.७   | आमोक्षित पान भोजन | ९६.१४  |
| असत्त्व            | १६७.९  | आमोचना            | १४८.५  |
| अगती               | २६.४   | आसादना            | ८४.८   |
| असत्त्व भाव        | २१.१७  | आसव               | १०९.१० |



|                     |        |                 |        |
|---------------------|--------|-----------------|--------|
| पुलाक               | १६०.२१ | प्रमत्तसमय      | ११८.१८ |
| पुष्कर द्वीप        | ४५.५   | प्रभावना        | ९२.३   |
| पूर्व प्रयोग        | १९७.८  | प्रवचनपरस्परत्व | ९२.१८  |
| पृथ्वी              | १५०.५  | प्रवीचार        | ४९.११  |
| पृथक्कर विनैक       | १५८.६  | प्रगत           | १२८.३  |
| पोष                 | २९.१०  | प्रायश्चित्त    | १४७.१० |
| प्रकीर्णक           | ४८.१३  | प्रेष्य प्रयोग  | ११२.४  |
| प्रकृति बंध         | ११९.२४ | प्रोपद्य        | १०६.१० |
| प्रक्षणा            | १२२.१५ | प्रोपधोपनाम     | ११३.१४ |
| प्रक्षणा-प्रक्षणा   | १२२.१६ |                 |        |
| प्रक्षारणिक         | १४३.२३ | वकुल            | १६१.३  |
| प्रतिपक्ष           | ९२.१५  | वध              | ११७.१  |
| प्रवर               | ७३.१३  | वध प्रतिपक्ष    | १०८.१३ |
| प्रतिपक्ष प्रत्यक्ष | २१५.६  | वध धेनु         | १६३.१० |
| प्रतिपक्ष व्यवहार   | ११०.८  | वध नाम ५        | १२६.२० |
| प्रतिपक्ष           | १६०.१६ | वधु ज्ञान       | ८८     |
| प्रतिपक्ष कुलीन     | १६१.६  | वधुविध ज्ञान    | ८८     |
| प्रत्यक्ष ज्ञान     | ६.१३   | वाहर नाम        | १२८.१३ |
| प्रत्यक्ष ज्ञान     | ९२.१६  | वाहर माध्यम     | १६३.१६ |
| प्रत्यक्ष ज्ञान     | १२६.१५ | वाच नाम         | ८८.०१  |
| प्रत्यक्ष ज्ञान     | १२८.६  | वाच नाम         | १६६.२० |
| प्रत्यक्ष ज्ञान     | १६१.०  | वाचिधु कुल      | १६१.१० |
| प्रत्यक्ष ज्ञान     | १३३.१  | वाचिधु कुल      | १६०.८  |
| प्रत्यक्ष           | ६३     | वद              | १०२.३३ |
| प्रत्यक्ष           | ११८.३  | वद नाम धर्म     | १११.१  |
| प्रत्यक्ष           | १०६.१  |                 |        |
| प्रत्यक्ष           | ४६.६   | वद              | १०.१६  |
| प्रत्यक्ष           | १०१.१३ | वद नाम          | १०.१६  |

|               |        |                  |        |
|---------------|--------|------------------|--------|
| भवनवासी       | ४७.४   | भार्ग प्रभावना   | ९२.३   |
| भष्य          | २२.४   | भादर्श धर्म      | १३९.३  |
| भद्रशान       | ३८.५   | भाना             | ८२.१७  |
| भरत क्षेत्र   | ४२.६   | भूतपु            | १०७.२  |
| भाव अनुयोग    | ५.१२   | मिथ्यादर्शन      | ११७.११ |
| भाव निधेय     | ३.२१   | मिथ्या शल्य      | १०४.२  |
| भावना         | ९६.६   | मिथ्योपदेश       | १७१.६  |
| भावेन्द्रिय   | २४.१७  | मिथ्यभाव         | २०.१   |
| भव सत्वर      | १३६.८  | मुक्त            | १३१.८  |
| भाषा समिति    | १३८.१० | मूकता            | १०३.११ |
| भुक्तपाल सयोग | ८३.१९  | मूलगुणनिर्वर्तना | ८३.१३  |
| भेद           | ७४.८   | मेरु गिरि        | ३७.५   |
| भोग           | १०६.११ | मैयुज            | १०२.२० |
| भोगान्तराय    | १२९.१६ | मोक्ष            | १६४.२१ |
| म             |        | मोहनीय कर्म      | १२३.१  |
| मतज्ञान       | ७.८    | मोक्षय           | ११२.२२ |
| मनि ज्ञानावरण | १२१.१५ | म                |        |
| मनपर्वद ज्ञान | १३.१३  | यथाख्यात चारित्र | १४५.१८ |
| मध्यनोक       | ३६.१   | यश कीर्तिनाम     | १२८.२२ |
| मनोमूर्च्छा   | ९६.१६  | याचना परिपह      | १४२.२  |
| मनोज्ञ        | १४९.२३ | योग              | ७९.४   |
| मरण, प्रया    | ११५.१६ | योग वप्रथा       | ८९.६   |
| मल परिपह      | १४२.६  | योग सञ्जाति      | १५७.२० |
| महोदय         | ९५.२२  | र                |        |
| मात्मन        | ८४.६   | रति मोहने म      | १२४.९  |
| मानुषोत्तर    | ४५.१२  | रस               | ७२.२   |
| मायाचार       | ८७.१४  | रस परित्याग      | १४६.१५ |
| माया शल्य     | १०४.१  | रश्मिभ्याङ्गान   | १०९.११ |

|                    |        |                |        |
|--------------------|--------|----------------|--------|
| पुस्तक             | १६० २१ | प्रमत्तसयत     | ११८.१८ |
| पुष्कर द्वीप       | ४५.५   | प्रभावना       | ९२.३   |
| पूर्व प्रयोग       | १६७.८  | प्रवचनपरसख     | ९२.१८  |
| पृच्छता            | १५०.५  | प्रवीचार       | ४९.११  |
| पृथक्त्व विनैक     | १५८.६  | प्रशस्त        | १२८.३  |
| पीठ                | २९.१०  | प्रायश्चित्त   | १४७.१० |
| प्रकीर्णक          | ४८.१३  | प्रेष्य प्रयोग | ११२.४  |
| प्रकृति बंध        | ११९.२४ | प्रोग्र        | १०६.१० |
| प्रधना             | १२२.१५ | प्रोपधोतशम     | ११३.१४ |
| प्रधना-प्रधना      | १२२.१६ |                |        |
| प्रतापरिपट्ट       | १४३.२३ | वक्तुग         | १६१.३  |
| प्रतिबन्ध          | ९२.१५  | वन्ध           | ११७.१  |
| प्रवर              | ७३.१३  | वन्ध अनिचार    | १०८.१७ |
| प्रतिबन्ध प्रारं   | २१५.६  | वन्ध द्वेद     | १६७.१० |
| प्रतिबन्ध व्यवहार  | ११०.८  | वचन नाम ५      | १२६.२७ |
| प्रतिवेचना         | १६२.१६ | वक्तु ज्ञान    | ८८     |
| प्रतिवेचना कुशीन   | १६१.६  | वक्तुविध ज्ञान | ८८     |
| प्रत्यक्ष ज्ञान    | ६.१३   | वाङ्मय नाम     | १२८.१३ |
| प्रत्यक्षज्ञान     | ९.२.१६ | वाङ्मय माध्याय | १६३.१६ |
| प्रत्यक्षज्ञान-वचन | १२६.१५ | वाङ्मय नाम     | ८८.२१  |
| प्रत्यक्ष ज्ञान    | १२८.६  | वाङ्मय नाम     | १६६.२० |
| प्रत्यक्षज्ञान     | १६७.१  | वाङ्मय नाम     | १६९.१० |
| प्रत्यक्षज्ञान     | १३३.१  | वाङ्मय नाम     | १६०.८  |
| प्रत्यक्ष          | ६.४    | वाङ्मय नाम     | १०२.३३ |
| प्रत्यक्ष          | ११८.५  | वाङ्मय नाम     | १३०.१  |
| प्रत्यक्ष          | १०६.१  | वाङ्मय नाम     | १०.१६  |
| प्रत्यक्ष          | ४६.६   | वाङ्मय नाम     | १०.१६  |
| प्रत्यक्ष          | १०१.१३ | वाङ्मय नाम     | १०.१६  |

|                      |        |                  |        |
|----------------------|--------|------------------|--------|
| यत्तेरेरी            | ७७ १८  | सघान             | ७४.८   |
| यपरोपण               | १०१ १३ | सघात नाम ६       | १२६ २१ |
| युन्मगं तप           | १४७ १२ | सज्ञा            | ७.१०   |
| " प्रायश्चित्त       | १४८ १३ | सज्ञी            | २६ १   |
| यु स क्रिया निवर्तिन |        | सज्जन            | १२४ १६ |
| (शुक्लध्यान)         | १५६ ११ | समूहान जग्म      | २८.८   |
| यदन सक्रानि          | १५७ १८ | मयमा मयन         | ८८.२४  |
| नि                   | ९५ २   | सयता सयन         | ११८.१५ |
| ती                   | १०४४   | सयम घर्म         | १३९ ६  |
|                      |        | सयोग             | ८३.७   |
| श                    |        | सरम्भ            | ८२ १८  |
| शक्र                 | १०७.१७ | सकर              | १३६ १  |
| श्वि मय              | १५.१९  | सवेग             | ९२ ७   |
| श्वानुसात            | ११२.५  | मशय मिध्यात्व    | ११७.२० |
| श्व भद्र             | ७२ १५  | समार अनुप्रेक्षा | १४०.२  |
| श्व परिपह            | १४१.२२ | सस्थान नाम ६     | १२६.२२ |
| शरीर नाम ५           | १२६.१७ | सस्थान विचय      | १५४.१९ |
| श्व                  | १०३.२२ | सस्थान           | ७३.७   |
| शुभ नाम              | १२८.१३ | सहनेन ६          | १२७.५  |
| शुभ योग              | ८० ९   | सचित्त यो नि     | २८.२०  |
| शशाग्रत              | १०६ १८ | सचित्त           | ११४.२  |
| शिश                  | १४९.१७ | सचित्त अपिघान    | ११४.१६ |
| शिक                  | १२४ ९  | सग अनुयोग        | ५.८    |
| शीव                  | ८४.१७  | सत्कार पुरस्कार  | १४२.७  |
| शिवक                 | १०५ ५  | सत्यव्रत भावनाए  | ९७ १   |
| शुलजान               | ५.१६   | समचतुरस्र सस्थान | १२६.२३ |
| शुल                  | ८६.९   | समभिरुढ नय       | १६.३   |
| शुलजानावरण           | १२१.१६ | समर्थ            | १०६.५  |
| शे नि                | २६.१७  | सम्भ्रम          | ८२.१८  |
|                      |        | समारम्भ          | ८२.१८  |
| स                    |        | समिति            | १३६.१९ |
| सक्रांति             | १५७.१३ | समन्वाहार        | १५२.१५ |
| सक्या                | ५.८    | सम्यक दर्शन      | २ १२   |
| सप्रह नय             | १५ १४  |                  |        |
| सथ                   | ८६ १०  |                  |        |



रोग परिपह  
रौद्र ध्यान

स

सन्धि ५  
सन्धि (इन्द्रिय)  
सन्धि (प्रत्यय)  
सवणीदधि  
सामान्तराय  
सिग  
लेख्या ६  
लेख्या (द्रव्य)  
लोक अनुप्रेक्षा  
लोककाश  
लोकपाल देव  
लोकातिक देव

ब

यचन गुप्ति  
यस वृषभ-नाराच सहन  
यस नाराच सहन  
यद्य अनिचार  
यद्य परिपह  
यर्जना  
यर्धमान अबधि  
यर्ण  
याचना  
यामन मरुपान  
यामन्य  
यिबिबि-मा  
यिबिबि-मि  
यिनट  
यिरेह  
यिन

१४२.४

१४३.१४

२०.१७

२४.२२

३१.१९

३६.९

१२९.१५

१६३.२

२१.१९

५८.८

१४०.७

६८.१४

४९.३

५९.१

९६.१६

१२७.७

१२७.८

१०८.१८

१४२.१

७१.३

११.११

७२.३

१५०.४

१२७.३

९२.२

१०७.२०

१०७.२०

१५७.३

४६.१२

६१.२

विनय तप

विनेय

विपरीत मिथ्यात्व

विपाक धर्मध्यान

विपुल मति

विमान

विमोचितावास

विरत

विरुद्धराज्यातिशय

विविधन शम्यासन

वृत्तपरीसङ्ख्यान

विवेक (प्रायश्चित्त)

विशुद्धि

विशवादन

विषय

विषय संरक्षणानन्द

विहायोगति

वीचार

वीतराग

वीर्य

वीर्यान्निराग

वेद ३

वेदनीय

वेदना आनन्दध्यान

वैचित्रिक शरीर

वैचित्रिक मिथ्यात्व

वैमानिक देव १२

वैयस्य

वैराग्य

वदन

वदनर देव ८

वज्र

वज्रशङ्ख

१४७.११

१००.१३

११७.१८

१५४.१८

११.२१

५४.१२

१७.१४

१५.११

११०.४

१४६.१३

१४६.११

१४८.१२

१२.१४

८९.९

१२.१८

१५३.२०

१२८.२

१५७.९

१९६.१५

८९.२६

१२९.१८

२१.१५

१२०.२१

१५२.२०

२९.२६

११७.२१

५६.६

१५७.११

१०१.७

९७.१५

७७.३

७६.७

११.१५



|                          |        |                   |        |
|--------------------------|--------|-------------------|--------|
| सम्पत्त्व                | १६६.४  | स्त्री परिपट्ट    | १४१.२० |
| सम्पत्त्वट्टि            | १०८.३  | स्त्री वेद        | ८६.१९  |
| सयोग केवली               | ११८.२० | स्नेहानन्द        | १५३.१९ |
| सराग सधम                 | ८८.२३  | स्नय              | ९२.८   |
| सस्तेषना                 | १०६.१९ | स्थावर            | १२८.९  |
| सविपाक निजरा             | १३२.२१ | स्थिति वध         | ११९.१२ |
| सहसा निक्षेप             | ८३.१८  | स्थिर नाम         | १२८.१९ |
| सर्वार्थसिद्धि           | ५५.२०  | स्थावर जीव ५      | २३.११  |
| साकार भद्र भेद           | १०९.१४ | स्थापना निक्षेप   | ३.१६   |
| सागर (आयु)               | २५.१७  | स्थितीकरण         | ९२.१   |
| साता वेदनीय              | १२२.२२ | स्नातक            | १६१.१२ |
| साधन अनुयोग              | ४.१९   | स्पर्श ८          | १२७.१४ |
| साधु                     | १४९.२२ | स्पर्शन           | ५.९    |
| साम्परायिक आसव           | ८०.२१  | स्मृति            | ७.९    |
| सामानिक                  | ४८.७   | स्थिति अनुयोग     | ४.२०   |
| सामायिक                  | ९२.८   | स्मृत्यनुपस्थापन  | ११३.१२ |
| सामायिक चारित्र          | ११३.१  | स्मृत्यन्तराधान   | १११.१६ |
| सासादन                   | ११८.१३ | स्पर्श गुण        | ७१.२३  |
| सामान्य शरीर             | १२८.७  | स्वयभूरमण         | ३६.२२  |
| सिद्धत्व                 | १६६.५  | स्वर्ग १६         | ५५.१   |
| सुखानुवध                 | ११५.१८ | स्वमुख अनुभवन     | १३१.२५ |
| सुभग नाम                 | १२८.१० | स्वाध्याय         | १४७.१२ |
| सुखर नाम                 | १२८.१२ | स्वामित्व अनुयोग  | ४.१८   |
| सूक्ष्म क्रिया प्रविपात  | १५८.१५ | स्वास्ति          | १२७.२  |
| सूक्ष्म साम्पराय चारित्र | १४५.१६ |                   |        |
| सूक्ष्म शरीर             | १२८.१४ | ह                 |        |
| सूक्ष्मपन                | ७६.६   | हास्य             | १२४.९  |
| सौमनस                    | ३८.६   | हिता              | ९५.१०  |
| स्वग्य                   | ७३.२१  | हिमादान           | १०६.२  |
| स्तेन प्रयोग             | ११०.२  | हिसानन्द          | १५३.१७ |
| स्तेय                    | ९५.११  | हीनाघिन मानोन्मान | ११०.६  |
| स्त्यानगृद्धि            | १२२.१७ | हीयमान            | ११.१२  |
|                          |        | हुडक सस्थान       | १२७.४  |



[ श्री नन्द किशोर जैन, एम० ए० लिखित ]

## प्रज्वलित प्रश्न

सामाजिक कुरीतियों एवं समस्याओं का दिग्दर्शक ड्रामा

इसमें केवल समस्याएँ ही नहीं, उनके अनूठे तथा नवीन परस्पर  
फलप्रद समाधान भी हैं ।

एजाज, धर्म के बाह्याङ्ग, अज्ञान, अशिखा, दहेज, विधवा-  
विवाह, कालाधन, प्रेम विवाह, धर्म एवं काम शिक्षा, विवाहपूर्व  
तथा विवाहेतर काम मन्त्र, रिगड़े सुक्क-सुक्कियाँ, कंगन आदि  
अनेक समस्याओं के सम्बन्ध में नये दृष्टिकोणों से विचार ।।

यह प्रेरणाप्रद ड्रामा जो दिनांक १२-२-७० को जैनवाग,  
डामोदर, जयपुर में मंचरुप ही चुका है, अपने परिचयित तथा  
मनोविज्ञान रूप में प्रकाशनाधीन है । अभी से अदमी प्रति गुराजित  
करा लें ।

एक नवाच्यिक क्रूर माग, गुणिशित बट्ट, विधवा पुत्री, कंगन  
के पीछे दीवाने पुक्क-सुक्कियों की रोवक गाथा ।

इसे पढ़कर आप कुछ सोचने के लिए विवश हों जायेंगे तथा  
बराबर आपने मूर्ख में निरवगतिता :— 'हूँ, टीक लो हूँ !'

